रजनीगंधा

[महाविद्यालय का मुखपत्र : प्रथम पुष्प]

झुमक महासेठ डॉ० धर्मप्रियलाल महिला कॉलेज
मधुबनी (बिहार)

कहाँ और क्या ?

● हिन्दी प्रभाग

राष्ट्र-निर्माण में शिक्षा-पद्धति की भूमिका १
शब्दों के घेरे में कैद साहित्य ५
आऽऽऽह, शायरी का भूत उतर गया ८
असामान्यता : कारण और निदान १०
चाय १२
मधुबनी चित्रकला १४
रूप+रंग+बास=फूल १६
प्रदूषण १९
शब्दों के आईने में २१
जा, फिर से चूहा बन जा २३
जाड़ा आया २४
मूक समर्पण २५
कभी नहीं अस्त होनेवाला दिनकर २९
कविताएँ ३३
भोलाराम का जीव ३४
तीन कविताएँ ३८
दो कविताएँ ३९
दहेज ४०
लघु कथाएँ ४२
विज्ञान के करिश्मे ४३
कुछ नहीं कहेंगे ४४
कुण्डलिया-चौपाई ४५
राष्ट्रीय एकता में छात्रों की भूमिका ४६
मानक अध्याय ४९
नारी ५०
मर्दों को भी हिस्टीरिया ५१
सफलता/अभिवादन ५२
धार्मिक चिन्तन का दस्तावेज ५४
मुझे मेरे रिश्तेदारों से बचाओ ५८
समस्या—थोड़ा फिर सुलझाइए ६१
हँसगुल्ले ६२

● मैथिली प्रभाग

लोक भाषा मैथिली का गीत काव्य १
चिनगी ३
बदलू समाज ४
स्त्री मुक्ति ५
विद्यापति जय हे ७
ककरा सुनाय ८
घर भात नहि, बाहर भ त ९

● अँग्रेजी प्रभाग

Anti-matter & Anti Universe 1
Word of Cheer 4
How Small Are We 5
Bio-Chemistry of a woman 6

● उर्दू प्रभाग

औरत की आजादी और घरेलू माहौल 1
तोहफा 3
औरत और तालीम 4
तोहफा 5
गजल 6

विशिष्ट आमंत्रित रचना

राष्ट्र-निर्माण में शिक्षा-पद्धति की भूमिका

डॉ० धर्मप्रिय लाल

शिक्षा का मूल उद्देश्य है मनुष्य को इस योग्य बनाना कि वह सामाजिक या राष्ट्रीय जीवन में स्वस्थ नागरिक की भूमिका निभा सके। इसके लिए आवश्यक है कि छात्र-समाज को अभिभावकों का आत्मीय समाज नहीं बनाया जाय। सरकार सही अर्थ में जब यह व्यापक दृष्टिकोण रखेगी कि उसे बच्चों को पढ़ाकर राष्ट्र के उत्तम नागरिकों के निर्माण के पवित्र कर्तव्य का पालन करना है, तभी शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति सम्भव है।

शिक्षाशास्त्रियों का समूह सतत चिन्तनशील रहा है कि शिक्षा का उद्देश्य क्या हो और शिक्षण पद्धति कैसी हो। जहाँ तक उद्देश्य का प्रश्न है, शिक्षाविद सदा भटकाव की स्थिति में रहे हैं और पद्धति सदा प्रश्नों के घेरे में रही है। ऐसा लगता है कि मनीषी परिस्थिति-निरपेक्ष चिन्तन का प्रयास करना श्रेयस्कर नहीं समझते रहे हैं। वे देश-काल की सीमा में बाँध कर शिक्षा उद्देश्य और शिक्षा पद्धति पर चिन्तन करते रहे हैं। परिणाम है, शिक्षित समुदाय का अपने और अपने भविष्य के प्रति अविश्वास या अनिश्चितता की अबूझ स्थिति।

'शिक्षा' शब्द के प्रयोग के साथ ही कुछ प्रश्न हैं, जो सामने आ जाते हैं। किसको शिक्षा, कैसी शिक्षा, किसलिये शिक्षा और किसके द्वारा शिक्षा—ये चार प्रश्न बड़े महत्व के हैं। एक प्रश्न और जुड़ा है— 'कहाँ पर शिक्षा'? भारत की प्राचीनतम शिक्षा पद्धति अपनी आरंभिक दशा में बड़ी स्पष्ट थी। उन दिनों शिक्षा का स्तर दो भागों में विभक्त था—गुरुकुल स्तर और आचार्य कुल स्तर। तीसरे स्तर में व्यावहारिक शिक्षा आती थी। बचपन होते ही शिशु गुरु को समर्पित हो जाते थे। उनका अपना न तो घर होता था और न अपना अभिभावक। गुरुकुल ही उनका घर था और गुरु ही अभिभावक। दूसरे स्तर के छात्र आचार्यों के अन्तेवासी होते थे। उन्हें युवावस्था तक आचार्य कुलों में वास कर शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती थी। इन दोनों के बाद छात्र स्नातक जीवन समाप्त समझ व्यावहारिक जगत की शिक्षा लेने गृहस्थ धर्म स्वीकार कर लेते थे।

आज यह पद्धति नहीं है। यदि है भी तो पद्धति में कमियाँ अधिक हैं। आवासीय विद्यालयों का जाल बिछा है, पर सर्वत्र उद्देश्यहीनता वर्तमान है। उद्देश्य है तो एक; और वह है अधिक से अधिक आर्थिक शोषण। शुल्क

से छः वर्ष तक के बच्चों की अनौपचारिक शिक्षा, शिशु शिक्षा, पाठशाला-विद्यालय-महाविद्यालय - विश्वविद्यालय शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षाः इन सभी शिक्षाओं पर करोड़ों की राशि व्यय की जा रही है और सबों का उद्देश्य होता है शिक्षण संस्था व्यवसाय चलाने वालों के लिए धन अर्जन के मार्गों का निर्माण। आज की शिक्षा और शिक्षण-संस्था व्यावसायिक संस्थान बनी है। शिक्षक, पाठ्य सामग्री, परीक्षा, शिक्षणस्थान: इन सबों के विषय निर्धारित होते हैं उनके द्वारा जिनकी प्रगति इन दिशाओं में स्वीकृत हो या नहीं. पर इतना स्वीकृत है कि वे इसके लिए सरकार द्वारा नियुक्त होते रहे हैं। सरकार द्वारा नियुक्ति ही उनकी अर्हता या क्षमता का प्रमाण है। इस छोटे से निबन्ध में शिक्षा जैसे गहन विषय पर विस्तार से चर्चा न तो संभव है और न समीचीन। अतः एक ही तत्व पर यहाँ विचार किया जा रहा है। शिशु जब ६ वर्ष का हो, उसे राष्ट्रीय सम्पत्ति समझ गुरुकुलों में प्रवेश दे दिया जाना चाहिये। परिवार से उसका पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेद हो जाना चाहिये। यह स्थिति २०-२५ वर्षों तक रहनी चाहिये। ६ वर्ष से लेकर २५ वर्ष तक व्यक्तियों के भरण-पोषण का पूरा भार गुरुकुलों-आचार्यकुलों पर होना चाहिये।

आज करोड़ों की राशि रेस्ट हाउस, गेस्ट हाउस, सर्किट हाउस, धर्मशाला, रेफरल अस्पताल, डाक बंगला आदि पर खर्च हो रही है, उनकी उपयोगिता क्या है? बड़े-बड़े अधिकारियों को यात्रा के समय घर से भी आराम देने के लिए उनका उपयोग हो रहा है। यह काम होटलों, कार्यालय से लगे अतिथि निवासों से भी संभव है। ये धन यदि आवासीय विद्यालयों के निर्माण पर खर्च हों तो समस्या का समाधान कठिन नहीं है। लाखों सैनिकों पर होनेवाला सारा व्यय सरकार वहन करती है तो शिक्षा जगत पर होनेवाला सारा व्यय-भार का वहन किया जाना कठिन नहीं है। यदि सम्पूर्ण शिक्षा-जगत को अलग रखा जाय तो आज जो अपार व्यय, अनुशासनहीनता, कदाचार आदि के दुष्परिणाम समाज को देखने पड़ते हैं, उनसे देश मुक्त हो जायगा।

प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन का २० से २५ वर्ष तक का भाग शिक्षा को समर्पित कर दे और इनके शिक्षण - स्थल शान्त वातावरण में निर्मित रहें, तो यह कार्य भारी व्यय-साध्य नहीं होगा। जहाँ तक अर्थकरी शिक्षा का प्रश्न है, जैसे चिकित्सा, अभियंत्रण आदि; इनके छात्रों का अध्यापन जनता के बीच हो सकता है। गाँव-गाँव में पाठशाला, शहर-शहर में उच्च विद्यालय आदि के सिद्धान्त शिक्षा के उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकते हैं, भले ही कुछ लोगों के लिए रोटी दे दें। अच्छी शिक्षा के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक छात्र अपने शिक्षण की अवधि में समाज से पूर्णतः अलग रहे, जैसे सैनिकों को समाज से अलग रखा जाता है। यदि शिक्षा जगत को समाज से अलग रखा जाय तो राजनीतिक प्रभाव, सामाजिक

कुरीतियों का प्रभाव, अन्धविश्वासों का प्रभाव; ये सभी छात्र-समाज के लिये अपरिचित रहेंगे। आज हर राजनीतिक दल का अपना छात्र-दल गठित है। इसका उपयोग राजनीतिक दल अपने वर्चस्व को कायम करने और चुनावों से लाभ उठाने के लिये किया करते हैं। इसका परिणाम होता है अध्ययन के प्रति अरुचि, शक्ति के प्रति लोभ और आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए धनार्जन की अवैध पद्धति के प्रति झुकाव। आज अपराधकर्मों में लिप्त लोगों में ऐसे लोगों की कमी नहीं है जिन्हें पढ़ने में समय लगाना चाहिए था, पर समय लगा रहे हैं अपराधकर्म में।

यदि २५ वर्ष की अवधि अध्यापन के लिए निर्धारित कर दी जाय तो आज युवकों के सामने जो बेकारी की समस्या भयंकर बनी हुई है वह समाप्त हो जायगी; साथ ही परिवार कल्याण के लिए किए जा रहे खर्च की राशि में भारी बचत होगी। जनसंख्या की वृद्धि पर नियंत्रण अनायास हो जायगा। यदि शिक्षा पद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया जाय तो अनेक विकराल समस्यायें स्वतः समाप्त हो जाएंगी। यह कोई कठिन काम नहीं है कि छात्र समाज को समाज से अलग कर दिया जाय। आज आवासीय विद्यालयों का जाल बिछा हुआ है। ये विद्यालय स्वतंत्र चल रहे हैं। इन सबों को बन्द कर सरकार को इनकी अलग व्यवस्था करनी चाहिये। बनारस का विश्वविद्यालय इस दिशा में एक आदर्श विश्वविद्यालय कहा जा सकता है। अन्तर यही है कि वहां गुरुकुलीय पद्धति नहीं है। अर्थात् सम्पूर्ण छात्र जीवन छात्रावास का जीवन न होकर आंशिक जीवन ही छात्रावास का जीवन रहता है।

जब तक शिक्षा जगत को सामान्य जन जीवन से जोड़कर रखा जायगा, शिक्षा अपने उद्देश्य से सदा दूर रहेगी। आज हम यही नहीं समझ पा रहे हैं कि अभिभावकों के लिए अपने बच्चों को क्यों पढ़ाना चाहिए। सभी सोचते हैं कि पढ़ाने का उद्देश्य है इज्जत की नौकरी अर्थात् ऐसी नौकरी जिसमें वेतन के अलावे ऊपरी आय की अच्छी सुविधा हो। नौकरी के साथ शिक्षा का जुड़ना शिक्षा के लिए दुर्भाग्य की बात है। कोई भी पढ़ा-लिखा युवक स्वतंत्र व्यवसाय अपना कर जीवन-यापन नहीं करना चाहता है। एक छोटी दूकान का मालिक ३००/ ४००/ मासिक देकर सेवक रखने की क्षमता अर्जित कर लेता है; पर पढ़ने-लिखने के बाद वही व्यक्ति ३००/ ४००/ मासिक की नौकरी के लिए हजार-पांच सौ घूस देने के लिए पूंजी एकत्र कर लेता है। स्पष्टतः शिक्षा की दिशाहीनता इसका कारण है। देश के शिक्षाविदों को, शिक्षा व्यवस्था में जो मौलिक चूकें हैं, उनका निराकरण बड़े पैमाने पर करना चाहिए।

शिक्षा का मूल उद्देश्य है मनुष्य को इस योग्य बनाना कि वह समाज, देश या राष्ट्र के

स्वस्थ नागरिक की भूमिका का सम्यक् निर्वाह कर सके। छात्र-समाज को अभिभावकों का आत्मीय समाज नहीं बनाया जाना चाहिये। उसे राष्ट्र का अभिन्न अंग मान कर राष्ट्र को उसके निर्माण में लगाना चाहिये। आज अभिभावक सोचता है कि हमारा पुत्र या पुत्री पढ़ लिखकर हमारे घर की श्रीवृद्धि करेगा या करेगी। होना यह चाहिये कि राष्ट्र या देश का अध्यापक यह समझे कि वह बच्चों को पढ़ाकर राष्ट्र के उत्तम नागरिकों के निर्माण के पवित्र कर्त्तव्य का पालन कर रहा है। जब तक शिक्षा जगत के साथ यह व्यापक दृष्टि नहीं जुड़ेगी, राष्ट्र का सही विकास नहीं हो सकता है और स्वस्थ वातावरण की आशा भी दुराशा ही बनी रहेगी।

हर बच्चा इस संदेश को लेकर आता है कि ईश्वर अभी मनुष्य से निराश नहीं हुआ है।

: टैगोर

वादों के विवादी घेरे में कैद साहित्य

डॉ० रजनीबाला अग्रवाल
प्रधानाचार्या

आधुनिक युग हिन्दी के लिए वादों का ही युग है। सुधारवाद, संशोधनवाद, पुनर्जागरणवाद, आदर्शवाद, मानवतावाद, छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नवलेखनवाद—ये सब हैं साहित्य जगत के विवादी वाद, जिनके सम्बन्ध में सदा चलते रहते हैं संवाद। लेकिन प्रश्न यह है कि जहाँ तक रवि की भी पहुँच नहीं है, वहाँ तक भी पहुँच जानेवाले कवियों को वादों के बन्धन में बाँधना सम्भव है ?

'साहित्य' शब्द का अर्थ अब बहुत व्यापक हो गया है। पहले यह शब्द कविता, काव्य, नाटक आदि कुछ ही विधाओं के लिए प्रयुक्त होता था। अब 'सहित' के भाव के लिए, 'हित-सहित' के अर्थ के लिए अथवा किसी कल्याणकारी ललित पद-रचना के लिए ही साहित्य शब्द का प्रयोग नहीं होता है, बल्कि भावना प्रधान और बुद्धि-प्रधान दोनों प्रकार की रचनाओं के लिए साहित्य शब्द का प्रयोग होने लगा है। यही नहीं, विज्ञान जैसे सब विषय का भी साहित्य मिलता है और प्रचार जैसे विषयों के लिए भी साहित्य उपलब्ध है।

इस प्रकार अब साहित्य की अर्थ-परिधि का जहाँ विस्तार होता जा रहा है वहीं साहित्यकारों का एक वर्ग, जिसे काव्यशास्त्री या आलोचक जैसे शब्दों से अभिहित किया जाता है, साहित्य को वादों के जटिल घेरे में कैद करने में दिन-रात व्यस्त रहता है। साहित्य या काव्य के सम्बन्ध में आम जनता की धारणा है कि "कवयः निरंकुशाः भवन्ति" या "जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचता है कवि।" कुछ लोग तो साहित्य को रेचनक्रिया का परिणाम मानते हैं। शान्त क्षणों में उद्वेलित भावना की बलात अभिव्यक्ति में काव्य-सृष्टि के सिद्धान्त को मानने वाले भी कम नहीं हैं। ऐसी हालत में, यह आश्चर्य का ही विषय माना जा सकता है कि इतना स्वच्छन्द, इतना उन्मुक्त, इतना निर्बन्ध होकर भी साहित्य आज साहित्यशास्त्रियों के कारण नाना वादों से घिरा हुआ अपने मूल लक्ष्य से दूर होता जा रहा है।

अभी कुछ ही वर्षों की बात है, नकेनवाद से अपनी प्रसिद्धि एवं साहित्य जगत में विशेष स्थान प्राप्त करने की आकांक्षा से प्रेरित हिन्दी के तीन मूर्धन्य विद्वानों ने, अज्ञेय को प्रगतिशील कहा जाय या प्रगतिवादी, इसका विवाद खड़ा किया। प्रगतिशीलता या प्रगतिवादी—

इसमें मौलिक अन्तर इतना ही है कि एक स्वभाव का बोधक शब्द है और दूसरा एक सिद्धान्त का प्रतिपादक। व्यवहार में दोनों एक ही-सा अर्थ देते हैं, पर 'विद्या विवादाय' की कहावत की चरितार्थता को भी तो आवश्यकता है। यह एक उदाहरण है। संस्कृत के काव्य शास्त्र के अनुशीलन से वादों का जितण्डा और स्पष्ट हो जाता है। भरत मुनि रसवादी आचार्य माने गये हैं। इनकी दृष्टि में काव्यों में रम्य नाटक में रसवाद का सम्यक प्रतिपादन होना चाहिए। इस रसवाद को लेकर उत्पत्ति-वाद (लोल्लट) अनुमितिवाद (शंकुक) भुक्ति या भोगवाद (नायक) अभिव्यक्तिवाद (अभिनव गुप्त)— ये चार नये वाद उठ खड़े हुए। रसवाद के बाद जिन वादों की चर्चा होती रहती है, वे हैं, अलङ्कारवाद (भामह-दण्डी), ध्वनिवाद (आनन्दवर्द्धन), वक्रोक्तिवाद (कुन्तक) रीतिवाद (वामन) व्यंजनावाद आदि।

साहित्य को दर्शन भी प्रभावित करता रहता है, अतः दार्शनिकों के वाद भी विवाद पैदा करते रहते हैं। शंकराचार्य का अद्वैतवाद, रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैतवाद, बल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैतवाद, संतों द्वारा अपनाया गया रहस्यवाद, फ्रायड का विकासवाद—ये सारे वाद दर्शन के घेरे से उछल-उछल कर साहित्य क्षेत्र में प्रविष्ट हो गये हैं। अद्वैतवाद में ब्रह्म तत्व के अतिरिक्त शेष तत्वों को माया की संज्ञा दी गई है। शुद्धाद्वैत में सूरदास की व्याख्या है—"ई तनु जीव एक सुख कारण उपजायो।" जो अन्तर आत्मा और जीव में दिखाया गया है वह "वादनि भेद करायो"—केवल भाषा के कारण है। विकासवादी फ्रायड का सिद्धान्त स्पष्ट है। साहित्य क्षेत्र में जो रहस्यवाद है, वही दर्शन के क्षेत्र में अद्वैतवाद की संज्ञा धारण करता है।

आधुनिक युग हिन्दी के लिए वादों का ही युग है। सुधारवाद, संशोधनवाद, पुनर्जागरणवाद, आदर्शवाद, मानवतावाद, छायावाद प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नवलेखनवाद— ये हैं साहित्य जगत के प्रसिद्ध विवादी वाद, जिनके सम्बन्ध में संवाद सदा चलते रहते हैं। इन वादों में से गाँधीवाद, अहिंसावाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि राजनीति क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त वादों का भी साहित्य पर प्रभाव पड़ता रहा है। कवि या साहित्यकार स्वच्छन्द मनोवृत्ति के होते हैं, अतः स्वच्छन्दतावाद से उन्हें प्रभाव-मुक्त नहीं माना जा सकता है।

इधर पाश्चात्य साहित्य शास्त्र के अध्ययन ने कुछ और वादों को वादों की पंक्ति में ला खड़ा किया है, जैसे औदात्यवाद, औचित्यवाद, अभिव्यंजनावाद, विरेचनवाद आदि। इन वादों के विवाद ने सहज अभिव्यक्ति-स्वरूप वाले साहित्य को महज बुद्धिवादों के लिए कठिन बना दिया है। साहित्यकार भाव-गगन का उन्मुक्त विहग होता है। उसे बन्धनों में बाँधना यदि सम्भव होता तो अभिव्यक्ति के क्षेत्र में उसके स्वातन्त्र्य की चर्चा के क्रम में वह

नहीं कहा जाता कि "अपि मांसं मषं कुर्यात् छन्द भंगो न कारयेत्।" कवि के सम्बन्ध में दो धारणायें हैं—पहली के अनुसार कवि जन्म-जात होता है और दूसरी के अनुसार कवि बनने के लिए साधना आवश्यक है। दोनों ही धारणायें अपने-अपने स्थान में सही हैं, पर कविता करने के क्षण में कवि सर्वथा स्वतंत्र स्थिति में रहता है। वह किसी वाद की सृष्टि नहीं, स्वयं स्रष्टा होता है। किसी आलोचक ने कवि की स्थिति की चर्चा करते हुए ठीक ही लिखा है-जो सभी वादों से परे है, वही सच्चा कवि हो सकता है। हमने वादों की चर्चा इस लिये की है कि स कारण लोग यह जान कर काव्य क्षेत्र में प्रवेश करें कि वे भाव जगत के स्वयं अधिपति होते हैं किसी बन्धन के शिकार नहीं।

●

मैं ईश्वर से डरता हूं, और ईश्वर के बाद उससे डरता हूं जो ईश्वर से नहीं डरता।

: शेख सादी

खटमिट्ठा

आऽऽऽफूऽऽऽऽ, शायरी का भूत उतर गया

प्रो० विनोद कुमार ठाकुर 'विश्वास'
हिन्दी विभाग

शायरी कोई ऑटोमेटिक मशीन का उत्पादन नहीं कि झट से मुँह खोला और पट से कविता नेताओं के भाषण की तरह झड़ने लगी। सो मैंने समझाने के लहजे में कहा—'भाई परमेश्वर जी, लिख तो आप बहुत चुके, अब थोड़ा पढ़िए भी। कहिए तो काव्यशास्त्र की कुछ स्पेशिमेन प्रतियाँ आपकी सेवा में हाजिर कर जाऊँ।' और अगले दिन ... ..

यकीन मानें मेरी सुनहरी आँखें तबसे आठ-दस लीटर आँसू बहा चुकी हैं, जबसे मैंने आँखों को यह ऑर्डर ईस्यू कर दिया है कि वे रोने का काम युद्धस्तर पर शुरू कर दें। दरअसल, मेरी आँखें गुलाम अली की तरह चुपके-चुपके रात-दिन आँसू बहाने के लिए कबसे तरस और तड़प रही थीं, क्योंकि रोने के हक से उन्हें मैंने उस दिन भी वंचित कर दिया था जिस दिन हमारी विश्व-विजेता क्रिकेट टीम श्रीलंका की ऐतिहासिक भूमि पर श्रीलंका जैसी टीम से भी पछाड़ खाकर बारहों खाने चित हो गई थी। लेकिन आज रोने का सिचुएशन सचमुच पैदा हो ही गया, जब मेरे एक नौकरीशुदा (और शादीशुदा भी) मित्र ने मुझे चाय पर बुलाकर और सोफा पर बिठाकर समोसे की तश्तरी पेश करते हुए और अपना सीना ४८ इंच का बनाते हुए मुझसे यह दुखद समाचार बताया कि वे अब पूर्ण प्रतिष्ठित कवि बन चुके हैं और कविता की पिच पर धुआँधार बल्लेबाजी करने लगे हैं। मेरी-उनकी दोस्ती फिल्म-स्टार की नहीं है। वे मेरे कितने डीप फ्रेंड हैं, इसका अन्दाजा आपको इसी से लग सकता है कि कविता वे करने लगे हैं और आँसू मेरी आँखों से बहने लगे हैं। मैं उनके जैसे कितने ही सेल्फस्टाइल्ड कवियों को मंच से हटाकर एवं बैंगन झोलों में भरकर घर जाते देख चुका हूँ अतः मैंने उन्हें मना किया—"भैया परमेश्वर जी! कृपा करके आप कविता (मतलब 'काव्य' से ही है) का चक्कर छोड़ दें। यदि तुकबंदी से ही कागज-स्याही एवं समय बर्बाद करना होता तो आनेवाली इक्कीसवीं सदी के महाकवियों में मेरा नाम कम से कम सेन्टर में होता। कविता छोड़ने से आपका भी भला होगा और आपके उन दोस्तों का भी, जिन्हें आपकी कविताएँ सुनने के लिए सहनशील बनना पड़ता होगा।' लेकिन बुद्धिजीवी कहीं

दूसरे की बात समझता है ! मेरे प्रस्ताव पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने का आश्वासन देने के बदले उन्होंने झट से एक कविता का प्रहार मेरे कोमलकान्त हृदय पर कर दिया—

'शायरी नहीं कोई मर्ज है,
शायरी तो, यारो फर्ज है।
कैसी नयी इसकी तर्ज है!
सुन लेने में क्या हर्ज है?'

'अच्छा, तो आदाब अर्ज है।'—कहता हुआ मैं चलने लगा तो उन्होंने मुझे टोका—'कहो, कैसी लगी शायरी? है न आला दर्जे का खयाल; और फिर तुकबन्दी मैंने कैसी मारी है, देखा?'

'बहुत खूब, बहुत खूब! दिल बगीचा-बगीचा हो गया!'—मैंने कहा। अपने काबिल दोस्त से मैं डायरेक्टली कैसे कहता कि शायरी कोई ऑटोमेटिक मशीन का उत्पादन नहीं कि झट से मुँह खोला और पट से कविता नेताओं के भाषण की तरह झड़ने लगी। तो मैंने समझाने के लहजे में कहा,— 'भाई परमेश्वर जी, लिख तो आप बहुत चुके, अब थोड़ा पढ़िए भी। कहिए तो काव्यशास्त्र की कुछ स्पेसीमेन प्रतियाँ आपकी सेवा में हाजिर कर जाऊँ।' और कहते-कहते उस समय भी मेरी ममता भरी आँखों से आँसू के कुछ गोले झड़ गये। मैं अब और रोने की स्थिति में नहीं था, इसलिए उनसे स्पष्ट बोल गया—'देखिए महाशय जी, भले ही आप आईने के सामने खड़े होकर नये नये अन्दाज में कविता पढ़कर खुद सुन और समझ लेते हों तथा अपने को हिन्दी में महाकवि, उर्दू में शायर-ए-आजम और अंग्रेजी में ग्रेट पोयट मान लेते हों, परन्तु वास्तविकता यही है कि आपकी काव्यधारा अब खतरे के निशान से तीस चालीस सेंटीमीटर ऊपर बह रही है और आपके श्रोताओं के हृदय-रूपी तटबंध में दरार पड़ने लगी है। अब या तो आप कविता से रिश्ता तोड़ लें या फिर मुझे मेरे हाल पर छोड़ दें। और फिर कविता से आपका हेल्थ भी तो डाउन हो रहा है!'

अगले दिन मुझे भगवान को सवा रुपये का गुड़ चढ़ाना पड़ा, क्योंकि मेरे दोस्त ने मेरा साथ छोड़ दिया, लेकिन अपनी मर्जी से नहीं, बल्कि अपने चिकित्सक की मर्जी से। हुआ यह कि मेरी बात सुनने के बाद वे अपनी गाड़ी (साइकिल को वे गाड़ी ही कहते हैं) फुल स्पीड में दौड़ाते हुए अपने चिकित्सक के पास पहुँचे। उनसे पूछा—'डॉक साहब, क्या मैं कविता छोड़ दूँ? क्या इसका असर मेरे हेल्थ पर भी पड़ेगा?' और उनके चिकित्सक ने भोलेपन से उत्तर दिया था—'नहीं, कविता छोड़ना आपके लिए जरूरी नहीं है। आप जी भर कर कविता गढ़ें। हाँ, केवल ऐसा काम नहीं करें जिसमें दिमाग लगाने की जरूरत हो।'

असामान्यता : कारण और निदान

प्रो० रजनी बैरोलिया

मनोविज्ञान विभाग

यह कहना बीसवीं सदी का उपहास करना है कि प्रेत-शक्ति के प्रवेश के कारण व्यक्ति पागल हो जाता है। वास्तविकता यह है कि व्यक्ति असामान्य उस परिस्थिति में हो जाता है, जब उपस्थित वातावरण के साथ वह स्वयं को ऐडजस्ट नहीं कर पाता है। वैसे, इसका निदान ढूँढ लिया गया है।

आरम्भ में लोगों का विचार था कि पागलपन का कारण दुरात्मा का प्रभाव है। वह युग अंधविश्वास का युग था। लोगों का विश्वास था कि सम्पूर्ण संसार भगवान या अलौकिक शक्तियों द्वारा संचालित होता है। यदि सामान्य व्यवहार का कारण दैवी शक्ति है तो असामान्य व्यवहार का कारण प्रेत-शक्ति है। ऐसा विश्वास किया जाता था कि सामान्य व्यक्ति के अन्दर प्रेत-शक्ति के प्रवेश के कारण ही असामान्यता आती है, अतः मानसिक विकृतियों को दूर करने का उपाय था कि प्रेत-शक्ति को किसी प्रकार बाहर कर दिया जाय। प्रेत-शक्ति से मुक्ति के लिए रोगियों को कष्टप्रद यातनाएँ दी जाती थीं। दानवी शक्ति पर नियंत्रण के लिए जादू-टोना और झाड़-फूँक का व्यवहार किया जाता था। यूनान के दार्शनिकों और रोम के चिकित्सकों में यह धारणा अत्यधिक पाई जाती थी। हमारे देश भारत में भी इस प्रकार का अंधविश्वास फैला हुआ था। आज के युग में भी भारत के अनेक क्षेत्रों में इस प्रकार की धारणाएँ देखी जा सकती हैं।

हिप्पोक्रेटस नामक वैज्ञानिक ने ही सर्वप्रथम असामान्यता से संबंधित वैज्ञानिक विचार को जन्म दिया। उन्होंने कहा कि मस्तिष्क में किसी प्रकार के दोष के फलस्वरूप ही असामान्यता आती है। लेकिन सही अर्थ में वैज्ञानिक धारणा के जन्म में अंधविश्वास के कारण अत्यधिक समय लग गया। १८ वीं शताब्दी में भौतिकशास्त्र और प्राणिशास्त्र की प्रगति से असामान्यता से संबंधित वैज्ञानिक विचार प्रकाश में आये।

सर्वप्रथम फिलिपपाइनेल ने मानसिक चिकित्सालय की स्थापना की। इन्होंने मानसिक व्याधि को एक साधारण रोग की तरह माना और इसके उपचार की सम्भावना को भी व्यक्त किया। इसके बाद ऐसे बहुत से मनोवैज्ञानिकों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने इसी प्रकार के विचार दिये। लोगों का ध्यान

इस ओर गया कि मस्तिष्क और शरीर दोनों ही एक दूसरे पर निर्भर हैं।

लेकिन २० वीं शताब्दी के आते-आते मनोवैज्ञानिकों में यह धारणा जोर पकड़ने लगी कि बहुत से रोगों का कारण मनोवैज्ञानिक भी होता है। सम्मोहन, हिस्टीरिया, मुक्त साहचर्य आदि ऐसे प्रमुख तत्त्व हैं जिनके माध्यम से मानसिक रोगियों को मनोवैज्ञानिक आधार पर समझ कर उनके उपचार की व्यवस्था की जाने लगी। सम्मोहन एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति ऐसी मोहनिद्रा में आ जाता है कि उसे तात्कालिक चेतना का ज्ञान नहीं होता है। व्यक्ति द्वारा सम्मोहनावस्था में ऐसी गत स्मृतियों को व्यक्त कराने में सुविधा होती है, जो अचेतन मन में चले जाते हैं। फलस्वरूप व्यक्ति को उसका ज्ञान नहीं होता है।

फ्रायड ने सम्मोहन के स्थान पर मुक्त साहचर्य का प्रयोग किया। उन्होंने व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व को अत्यधिक महत्त्व देते हुए कहा कि जब व्यक्ति इस द्वन्द्व का समाधान खोजने में असमर्थ होता है, तो वह असामान्य हो जाता है। उन्होंने मनोविश्लेषणात्मक विधि को चिकित्सा के रूप में प्रयुक्त किया।

मानसिक रोग जन्मजात नहीं होता है, वरन् जब व्यक्ति वातावरण के साथ अभियोजन में असमर्थ होता है तो वह असामान्य हो जाता है जिसे उपयुक्त चिकित्सा विधि द्वारा दूर किया जा सकता है। मानसिक रोगों को व्यक्ति की कार्य-पद्धति और व्यक्तित्व के संगठन में विकृति के आधार पर समझा जा सकता है। सामाजिक और जैविक कारक ही इस रोग की जड़ होते हैं, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति की क्रियात्मक, भावात्मक और ज्ञानात्मक पहलुएँ प्रभावित हो जाती हैं। मानसिक रोगों को दो रूपों में बाँटा जाता है। प्रथम मनःस्नायु विकृति है, जो साधारण मानसिक विकृति है। यह रोग संवेगात्मक और संघर्षमय परिस्थिति से उत्पन्न होता है और मनश्चिकित्सा की विधि इसके लिए उपयुक्त है। दूसरा मानसिक रोग मनोविकृति है, जो एक जटिल विकृति है। ऐसे रोगों का 'व्यक्तित्व' पूर्णतः विघटित होता है, और उसकी चिकित्सा मानसिक चिकित्सालय में भर्ती द्वारा ही सम्भव है।

चाय

प्रो० किरण कुमारी झा

रसायनशास्त्र विभाग

पानी के बाद, आज सबसे सस्ता एवं सुलभ पेय है चाय—घर परिवार के लिए भी और अतिथि-सत्कार के लिए भी। लेकिन देखिए, कहीं ऐसा तो नहीं कि जिसे आप चाय समझकर पी रही हैं, वह थोड़ी सी असावधानी के कारण आपके अन्दर जहर फैला रही है।

इस वैज्ञानिक युग में चाय को कौन नहीं जानता! हरेक वर्ग के परिवार में इसकी उपयोगिता सामान्य हो चुकी है। पुराने जमाने में लोगों का स्वागत जहाँ दूध, शर्बत आदि से किया जाता था, आज वह स्थान चाय ने ले लिया है। इसलिए यह जानना जरूरी है कि आखिर कौन सा ऐसा गुण है, जिसके कारण चाय अधिक लोकप्रिय, उपयोगी हो गयी है। किसी भी समय मनुष्य चाय पीकर अपने को तरोताजा महसूस कर सकता है, ऐसी क्या खूबी है इसमें ?

तो सबसे पहले यह जान लें कि अच्छी चाय तैयार कैसे की जाती है। सर्वप्रथम दूध को खौला लें। उसे ढँक कर रख लें। पुनः छोटे मुँह वाले बर्तन में पानी को खौला लें। जब पानी खौलने लगे तब चूल्हे से उतार कर उसमें चाय पत्ती मिलायें। ढँक कर चार-पाँच मिनट छोड़ दें। चाय की प्याली में इच्छानुसार चीनी एवं दूध को मिला कर चाय छान लें। यह चाय स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होगी।

अक्सर लोग दूध, चीनी एवं पानी को खौलाते हैं। खौलते हुए पानी में चाय की पत्ती डाल कर पुनः खौलाते हैं। कोई रंग लाने के लिए, तो कोई कड़ा करने के लिए, लेकिन ऐसी चाय पीने का मतलब है-घूँट-घूँट कर जहर पीना। जब तक पी, पी, और जब जहर का घड़ा भर गया, तो..........!

आखिर ऐसा क्यों होता है ? एकदम सीधी सी बात है। पानी 100°c पर उबलता है। इसमें दूध और चीनी मिला देने पर इसका B. P. 100°c से अधिक हो जाता है। 100°c के अन्दर ही चायपत्ती गर्म पानी के प्रतिक्रियास्वरूप "कैफीन" नाम का एक रसायन देती है। वैसे, कैफीन कम मात्रा में लेने पर शरीर के लिए लाभदायक है। कैफीन शरीर में जाने पर शरीर के अन्दर सोयी हुई ऊर्जा को उत्तेजित कर देता है, जो ऊर्जा नाकाम पड़ी रहती है, उसे शुद्ध करने की स्थिति में ला देता है। इसी उत्तेजित ऊर्जा के कारण चाय पीने के बाद ही स्फूर्ति महसूस होने लगती है।

इस रूप में चाय की पत्ती चुस्ती-फुर्ती प्रदान करती है। लेकिन चाय की पत्ती, जब पानी खौलता हो तब डाली जाय और डालने के बाद भी इसको खौलाया जाय, तो इसका तापक्रम 100°c से अधिक हो जाता है, जिसके कारण कैफीन नहीं मिल पाता है। इस ताप-क्रम पर एक दूसरा ही मादक द्रव्य प्राप्त होता है, जिसे 'टेनीन' कहते हैं। टेनीन शरीर के लिए बहुत ही हानिकारक है। इसका असर मस्तिष्क के छोटे-छोटे तन्तुओं पर पड़ता है। यह स्नायुतंत्र को प्रभावित करता है। टेनीन की एक-एक बूँद शरीर में जमा होने पर यह ज़हर से भी घातक हो सकता है।

इसलिए, चाय पीते हैं, तो पीएँ अवश्य, मगर सावधानी के साथ।

जिसने सारी जिन्दगी खून का जाम पिया है, उसे दवा का जाम क्या फायदा करेगा।

: राम कुमार वर्मा

मधुबनी चित्रकला : *दीवार से 'फाइव स्टार' तक*

प्रो० सुभद्र झा
समाजशास्त्र विभाग

जी हाँ, वे दिन लद गये, जब कला सिर्फ कला के लिए थी। आज की कला कला के लिए भी है और लोक-जीवन के लिए भी; और मिथिलांचल की हस्तकला तो अब भीत से उतार कर विदेश-यात्रा भी कर रही है।

मिथिला संस्कृति एवं कला का केन्द्र रही है। औद्योगीकरण के कारण हमारी बहुत सारी कलाएँ नष्ट हो रही हैं और उनके बिलकुल विलोप होने का भय है। इसलिए इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि कलाओं का अध्ययन किया जाय। जन-जीवन से सम्बन्धित लोक संस्कृति की कलाएँ हमारे जीवन से क्रमशः अलग होती जा रही हैं। बदलते जमाने में जब हम हर दिशा में प्रगति के नये चरण बढ़ा रहे हैं तो लोक जीवन में इन कलाओं का अध्ययन हमें अपनी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति पूर्ण जागरूक बनाये रखने में बड़ा ही सहायक सिद्ध होगा।

मिथिलांचल में प्रचलित चित्रों का विवरण इसकी प्राचीन सभ्यता का द्योतक है। निगम काल में 'सर्वतोभद्रादिमण्डल' रूप में, आगमन काल में 'त्रिकोणादि' रूप में और वर्तमान काल में 'गृहीत प्रतिबिम्ब' रूप में चित्र देश की सांस्कृतिक परम्परा का प्रकाशन करते हैं। प्राचीन भारतीय ऋषि-मुनियों की विलक्षण प्रतिभा और हस्त-पटुता की परिचायिका, यान्त्रिक युग से अब तक निरन्तर वर्तमान, ऋग्वेदोत्तर रेखाकृति न केवल भारतीयों के, अपितु समस्त मतिमानों के मनन योग्य है। मिथिला की सांस्कृतिक लोकचित्र कला इसी वैदिक रेखाकृति के आधार पर कालान्तर से शक्तिरक्षक तंत्रशास्त्र का अनुगत, सम्मत और संस्कृति सम्बर्द्धित रूप है।

मिथिलांचल में प्रचलित मैथिल शैली के चित्र अति प्राचीन काल से ही चले आ रहे हैं, जिनमें सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक तथा राजनैतिक दृष्टिकोण भी छिपे हैं। १९६५-६६ में, जब क्षेत्र में सूखा फैला हुआ था, हस्तकला निर्यात निगम, दिल्ली के डिजाइनर श्री भास्कर कुलकर्णी ने मिथिला चित्र कला को दीवाल पर से कागज पर उतारा। इसके बाद श्री उपेन्द्र महारथी, जो शिल्प अनुसंधान संस्थान, दिघा (पटना), बिहार सरकार के निदेशक थे, ने इस ओर अपना ध्यान दिया। १५ अक्टूबर १९७२ को मधुबनी में कार्यालय की स्थापना की गई जिसका मुख्य उद्देश्य बिचौलियों को समाप्त करना तथा शिल्पियों का निर्यातक या विपणन संस्थाओं से सीधा सम्पर्क स्थापित कराना माना

गया। विदेशियों में भी अच्छी-अच्छी कलाकृतियों की माँग होने लगी और दिन-प्रतिदिन विकास होने लगा।

कलाकारों को प्रोत्साहित करने एवं उनके मनोबल को ऊँचा उठाने के लिए सरकार ने कुछ पुरस्कारों की भी व्यवस्था की है और मिथिला की इन पाँच महिला कलाकारों को राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है—सीता देवी, गंगा देवी, गोदावरी दत्ता, महासुन्दरी देवी एवं (स्वर्गीया) जगदम्बा देवी। इसके साथ ही जगदम्बा देवी, सीता देवी एवं गंगा देवी को 'पद्मश्री' की उपाधि से भी अलंकृत किया जा चुका है। शान्ति देवी और हीरा मिश्रा को भी पुरस्कृत किया जा चुका है। अब उचित मूल्य पर किसी भी चित्रकला का विनिमय चलने लगा है। आज मिथिला लोकचित्र कला को कपड़ा पर भी उतारा जा रहा है तथा लगभग ४० कलाकार ऐसे हैं जिनकी वार्षिक उत्पादन राशि ५०००० रु० तक की है।

कला का कार्य व्यक्ति और समाज को परस्पर समीप लाना है। कला अब मात्र साधना, भाव-प्रकाशन या अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है, अब यह सहारा बन चुकी है, जीवन-यात्रा की सरिता का रूप ले चुकी है।

सौन्दर्य कला में निहित है, कलाकार में नहीं।

: अज्ञात

रूप + रंग + बास = फूल

प्रो० मीना झा
जन्तुशास्त्र विभाग

तेरे होंठ क्या हैं, गुलाबी कमल हैं ... ये नर्गिसी आँखें ... रजनीगंधा फूल तुम्हारे महँके यूँ ही जीवन में .... चेहरा है जैसे झील में हँसता हुआ कमल—जी हाँ, अधिकांश सुन्दर वस्तुओं के उपमान बनते हैं फूल ही; और हर कोई यही चाहता है कि उसके जीवन में फूल ही फूल खिलें—रंग-बिरंगे फूल, सुगन्धित फूल। आइए, ज़रा करीब से देखें उन फूलों को।

फूल निश्चय ही कुदरत का सबसे खूबसूरत करिश्मा है, तभी तो शायरों और कवियों ने हर सुन्दर उपकरण को उपमित करने में फूलों की मदद ली। शायरों ने माशूका के होठों को गुलाबी कमल, आँखों को नर्गिस और बदन की खुशबू को रजनीगंधा के रूप में पाया है। ऐसे फूलों के बारे में जानना हमारे लिए निहायत ज़रूरी है। फूल जंगलों और उद्यानों में, पहाड़ों और पठारों में, जल और समतल में ही नहीं, अपितु रेगिस्तानों में भी खिलखिलाते हुए नज़र आते हैं। महावनों में खिले आर्किड्स के फूल नैसर्गिक सौन्दर्य और रंगों की भिन्नता में बढ़-चढ़कर होते हैं। आर्किड्स के कुछ मशहूर फूल हैं—डेन्ड्रोबियम, जिसके आकर्षक पीले फूलों पर लाल धारियाँ होती हैं; नेफ्रोडिया (बर्ड्‌स नेस्ट) में भूरे फूल और वेन्डा में गुलाबी व हल्के नीले फूल होते हैं। जहाँ कुछ फूल (जैसे—गुलाब जुही, चमेली, बेला और रातरानी) अपनी खुशबू के लिए प्यारे हैं, वहीं हौलीहॉक, सूर्यमुखी, लार्कस्पर लिली, गैलार्डिया, फ्लॉक्स और कॉसमॉस गंधरहित होकर भी अपने सौन्दर्य के लिए सर्वत्र प्रिय हैं।

रंग-बिरंगे फूलों में रंग आता कैसे है, यह एक रोचक प्रश्न है। जिस तरह क्लोरोफिल पत्तियों को हरा रंग देता है, उसी तरह फूलों की पंखुड़ियों की कोशिकाओं में स्थित क्रोमोप्लास्ट के पिगमेण्ट्स जैसे कैरोटिन एवं जैन्थोफिल आदि पीले तथा लाल रंगों के लिए उत्तरदायी हैं। सफेद रंग एन्थोजैन्थिन के कारण होता है। कोशिका में निहित वैक्योल में स्थित कोशिका द्रव्य में घुला पदार्थ "एन्थोसायनिन" फूलों के बैंगनी, नीले तथा गुलाबी रंगों का कारण है। टमाटर के फलों का सुन्दर लाल रंग लाइकोपीन नामक पदार्थ की वजह से होता है। सुन्दर फूल छोटे पौधों से लेकर ऊँचे वृक्षों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। पौधों में पाये जाने वाले विभिन्न

पिगमेन्ट्स प्रकाश के वर्णक्रम में पाये जाने वाले भिन्न-भिन्न रंगों को परावर्तित करते हैं तथा बाकी किरणें शोषित कर लेते हैं, फलतः उसी रंग के प्रतीत होते हैं। जैसे क्लोरोफिल हरा रंग बिखेरता है और बाकी रंगों को शोषित करता है, उसी प्रकार लाल तथा पीले फूलों के पिगमेन्ट्स लाल तथा पीले रंग बिखेरते हैं तथा बाकी सारे रंगों को जज्ब कर लेते हैं। इसी कारण वे उन रंगों में दिखाई पड़ते हैं। जहाँ गुलमोहर तथा अमलतास के फूल ऊँचे वृक्षों पर लगते हैं, वहीं जीनियाँ एवं बालसम के फूल छोटे पादपों में। इनके अतिरिक्त लतरों में लगने वाले फूलों में बिगोनिया, बोगेनवेलिया, रेलवे क्रीपर, कचनार तथा एन्टीगोनन प्रमुख हैं। सब्जी वाले पौधों के फूल सामान्यतः पीले, पर सुन्दर होते हैं, जैसे—कुम्हड़े, तरोई और खीरे के फूल। भिंडी के पीले फूलों के अन्दरूनी हिस्से में लाल भूरा रंग दृष्टिगोचर होता है। मालवा, जहहुल भी भिंडी के फूलों की भाँति बहुरंगी होते हैं।

जलीय पौधों में कमल और कुमुदिनी के फूल खास तौर से उल्लेखनीय हैं। फूलों का सारे संसार में बड़ा महत्त्व है। जिस तरह दुनिया के तमाम मुल्कों ने अपना एक राष्ट्रीय पक्षी नियत किया है, उसी तरह एक राष्ट्रीय फूल भी मुकर्रर कर रखा है। भारत का राष्ट्रीय फूल कमल है। इटली व कनाडा का सफेद लिली और फ्रांस का लिली है। कुछ देशों ने फूलों को अपना राष्ट्रीय प्रतीक ही माना है; जैसे—ब्रिटेन एवं ईरान ने गुलाब को, स्पेन ने अनार के फूल को तथा जापान ने गुलदाऊदी को अपनाया है। फूलों के नाम विभिन्न स्थलों तथा देशों में भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, परन्तु वनस्पतिशास्त्रियों ने उनके नामकरण के एक अन्तर्राष्ट्रीय तरीके को ईजाद की है। प्रत्येक फूल या पौधे का एक वैज्ञानिक या वानस्पतिक नाम होता है और वह फूल या पौधा समूचे विश्व में उसी नाम से स्वीकार किया जाता है। वानस्पतिक नामों के कुछ नमूने यों पेश किये जा सकते हैं—गुलाब : Rosaindica, कुमुदनी : Nymphea आदि। फूल वस्तुतः पौधे के प्ररोह का रूपान्तरित हिस्सा है। फूल की पंखुड़ियों की प्रकृति तने पर लगी पत्तियों जैसी होती है। फूल का महत्त्व मानव जीवन में अनेक पहलुओं से है। पौधे की सृष्टि का आधार फूलों में निहित है। फूलों में पंखुड़ियों द्वारा ढँके नर तथा मादा जननांग होते हैं। वे स्टेमेन तथा कार्पेल हैं। वे दूसरे रक्षात्मक अंग आंतरिक पेटल्स तथा सेपल्स द्वारा घिरे होते हैं। स्टेमेन से परागकण विभिन्न साधनों जैसे—हवा, कीट, जन्तु, पानी द्वारा कार्पेल के ऊपरी हिस्से स्टिग्मा तक लाये जाते हैं, ताकि प्रजनन क्रिया हो सके और तब कार्पेल फल बन जाते हैं, जिसमें पैदा होता है बीज और उसके पौधे की सृष्टि का द्योतक भ्रूण सुषुप्तावस्था में होता है।

फूल कीटों को आकर्षित करने हेतु पंखुड़ियों के रंगीन वस्त्रों के अलावा अन्य उपाय भी करते हैं; जैसे—मकरन्द का स्राव,

जिसमें ग्लूकोज एवं फ्रक्टोज आदि पोषक शर्करा है जो मक्खियों और तितलियों को आकर्षित करते हैं। फूलों की सुन्दर गन्ध उनकी कोशिकाओं में उपस्थित रासायनिक पदार्थों के कारण होती है।

फूलों का खिलना एक हार्मोन फ्लोरेजेन पर निर्भर करता है। मौसमी फूल कुछ शीतकाल में; जैसे गेन्दा, गुलदाऊदी, कुछ फूल ग्रीष्मकाल में और कुछ अन्तरंग रूप से वर्षाकाल में खिलते हैं, पर निरन्तर प्रयोग करने वाले वनस्पति वैज्ञानिकों ने कृत्रिम उपाय द्वारा असमय फूल खिलाए हैं। यह क्रिया रूसी वैज्ञानिक लायसेंको ने 'वर्नलाइजेशन' क्रिया द्वारा की तथा पौधों में बीजों के तापक्रम-नियन्त्रण द्वारा उनसे कम समय में ही फूल खिला देने में सफल हुए। फोटोपीरियडिज्म के प्रभाव द्वारा भी फूल अत्यन्त कम समय में खिलाये जा सकते हैं।

जाड़े में फूल देने वाले पौधों को गर्मी में भी नियंत्रित परिमाण में प्रकाश देकर उनसे फूल पाये जा सकते हैं। इसके विपरीत ग्रीष्मकालीन फूलों को जाड़े में भी अपेक्षाकृत लम्बी अवधि तक प्रकाश देकर फूल बनाये जा सकते हैं। फूलों का खिलना फल-प्राप्ति के लिए आवश्यक है, जिससे फूलों पर किए जाने वाले इन प्रयोगों की आर्थिक महत्ता ज्यादा है। बाडिंग द्वारा एक चुने हुए पौधे की कली को दूसरे पौधे पर चाकू से बने स्थान में प्रत्यारोपित कर हम एक ही पौधे पर अनेक तरह के फूल पा सकते हैं। लिहाजा, एक गुलाब के पौधे पर रंग-रंग के फूल देखकर आश्चर्य न करेंगे।

कभी-कभी स्वतः या कृत्रिम उपाय 'एक्स-रे' आदि द्वारा फूलों के रंग या स्वभाव में अचानक परिवर्तन आ सकता है, और यह क्रिया म्यूटेशन कहलाती है। कृत्रिम रूप से इस क्रिया द्वारा बड़े फूल तथा बहुरंगे फूल हम पा सकते हैं। इसके अलावा कुछ फूलों में कोशिकाओं के न्यूक्लियस में आनुवांशिक गुण धारण करने वाले तथा गतिविधियों पर नियन्त्रण करने वाले क्रोमोसोम्स या गुणसूत्र, जिसकी संख्या हमेशा नियत रहती है, कभी-कभी दूनी या तिगुनी हो जाती है। ऐसे पौधे पैलोप्लायड कहलाते हैं। ऐसे पौधों में फूल की आकृति तथा आकार दोनों ही सामान्य पौधे से भिन्न कहीं ज्यादा बड़े होते हैं। ऐसे फूलों से बड़े फल बनने की आशा रहती है।

तो हम पाते हैं कि फूलों की खूबसूरती उनकी नशीली खुशबू आदि से अलग उनके बारे में काफी कुछ जानने को है। बागवानी एक ऐसा शौक है जो युवावर्ग के लिए रोचक और शिक्षाप्रद दोनों साबित हो सकता है।

प्रदूषण

प्रो० सविता वर्मा
वनस्पति विज्ञान विभाग

कल-कारखाने, पेट्रोलियम पदार्थों से चलनेवाले वाहन, अन्य रासायनिक पदार्थ, तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या, विभिन्न प्रकार के शोर-शराबे—ये सारे प्रदूषित कर रहे हैं हमारे पर्यावरण को, वातावरण को; और हम घुटन महसूस कर रहे हैं। हम स्वच्छ एवं स्वस्थ वातावरण में साँस ले सकें, इसके लिए प्रदूषण पर नियंत्रण आवश्यक हो गया है।

प्रदूषण का सामान्य अर्थ गन्दगी से है।

मानव अपनी दैनिक गतिविधियों द्वारा वातावरण को विभिन्न तरीकों से रूपान्तरित करता रहा है एवं २० वीं शताब्दी की स्वच्छहीन तकनीकी प्रगति वातावरण को रूपान्तरित कर रही है। मानव द्वारा वातावरण में किये गए परिवर्तन उसकी आवश्यकताओं, ज्ञान और मूल्य के परिणाम हैं। औद्योगिक क्रान्ति, बढ़ती हुई आबादी और नगरीकरण इन परिवर्तनों की गति को और बढ़ावा दे रहे हैं। शिल्प वैज्ञानिकी के अत्यधिक हितों के साथ-साथ सुन्दर वातावरण और प्राकृतिक स्रोतों के विनाश का भय भी हर समय बना रहता है। वातावरणीय प्रदूषण आधुनिक सभ्यता, जो शिल्प वैज्ञानिकी प्रगति पर आधारित है, का नतीजा है। प्रकृति के मूलभूत नियमों की अवहेलना, वातावरण का दुरुपयोग, साधारणतया शीघ्र उन्नति और औचित्य एवं लघु दूरदर्शित आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप जीवन के दोनों अपरिहार्य तत्व, वायु और जल में प्रदूषण हो जाता है।

एक सभ्य विश्व मुख्यतया सतही जल पर आश्रित रहता है। सतही जलों और अन्य स्रोतों के अव्यवस्थित उपयोग के परिणामस्वरूप कॉलरा, टायफायड, पीलिया तथा अतिसार जैसी कई बीमारियों की गंभीर महामारी फैल जाती है।

प्रदूषण के फैलने के कई कारण होते हैं जिनमें कार्बन डाय-ऑक्साइड की बढ़ती हुई मात्रा, वाहित मल का नदियों एवं समुद्र में गिराया जाना, उद्योग से अवशिष्ट रासायनिक पदार्थ, डिटरजेंट एवं कीटाणुनाशक पदार्थों का प्रयोग इत्यादि प्रमुख हैं।

प्रदूषण भी कई प्रकार के होते हैं—

(1) वायु प्रदूषण।—मानव सदा ही वायुमंडल को प्रदूषित करता रहा है। प्राचीन समय में मनुष्य आग जलाकर प्रकृति को प्रदूषित करता रहा है। इन दिनों यातायात के

विभिन्न साधन जैसे मोटर, रेलगाड़ियाँ तथा वायुयान आदि, जो पेट्रोल, कोयले तथा डीजल से चलते हैं, निरन्तर वातावरण को प्रदूषित कर रहे हैं।

(2) जल-प्रदूषण :—भारत में लगभग सभी नगरों में पीने के जल का प्रबन्ध नदियों से किया जाता है। नदियों को प्रदूषित करने में प्रमुख हाथ कारखानों द्वारा अवशिष्ट रासायनिक पदार्थों तथा वाहित मल का है।

(3) भोजन प्रदूषण :—वातावरण में उपस्थित बैक्टीरिया ही भोजन को प्रदूषित करता है। भोजन के प्रदूषण से दो प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं :—

(a) आमाशिक तथा आँत सम्बन्धी

(b) नाड़ी एवं पक्षाघात संबंधी

(4) शोर प्रदूषण :—मोटर, बस, ट्रक, वायुयान, रेडियो, लाउडस्पीकर तथा बड़े-बड़े कारखानों की बड़ी मशीनों द्वारा उत्पन्न ध्वनियाँ वातावरण को प्रदूषित करती हैं। तीव्र ध्वनि के कारण मनुष्य श्रवण शक्ति खो देता है। तीव्र ध्वनि सुनने के कारण बेचैनी तथा सिर दर्द की शिकायत भी होने लगती है। इस प्रदूषण पर यदि ध्यान न दिया जाय तो मनुष्य पागल भी हो सकता है।

(5) भूमि-प्रदूषण :—भूमि - प्रदूषण विभिन्न प्रकार की रासायनिक खाद द्वारा होता है। ज्यादा खाद उपयोग करने पर भूमि की उर्वरा शक्ति धीरे धीरे समाप्त होती जाती है।

(6) जनसंख्या-वृद्धि-प्रदूषण : किसी भी देश में जनसंख्या वृद्धि भी प्रदूषण के लिए उत्तरदायी है। यदि काफी तेजी से जनसंख्या में वृद्धि होती रही तो एक समय ऐसा आ सकता है कि पृथ्वी पर खड़े रहने के लिए भी जगह न मिले।

प्रदूषण का नियन्त्रण

प्रदूषण को नियन्त्रित करना असंभव सा प्रतीत होता है। इस पर नियन्त्रण रखने के लिए जरूरी रोकथाम के ये उपाय हैं :

(१) नये-नये कारखाने आबादी से दूर वाली जगहों में खोले जाएँ तथा कारखानों से निकले अवशिष्ट रासायनिक पदार्थों को नदियों में न गिराकर नष्ट कर दिया जाय।

(२) बिजली द्वारा संचालित यातायात का प्रबन्ध किया जाय।

(३) वाहित मल को नदियों में न गिराकर खाद के रूप में परिवर्तित कर दिया जाय।

(४) वृक्षारोपण किया जाय जिससे कार्बन डाय-ऑक्साइड एवं ऑक्सीजन का संतुलन बना रहे।

(५) डी० डी० टी०, गेम्ज़ीन तथा फिनाइल जैसे विषैले पदार्थों का प्रयोग कम किया जाय।

(६) जनसंख्या-वृद्धि प्रदूषण की रोकथाम के लिए परिवार नियोजन पर अधिक बल दिया जाय।

यादों के आईने में

महाविद्यालय का एक महत्त्वपूर्ण दिवस

उषा कुमारी
चतुर्थ वर्ष कला

दिसम्बर का पहला दिन। प्रातः से ही सूर्य की सुनहली किरणें वातावरण में गर्मी भरने लगी थी। धीरे-धीरे महाविद्यालय का वातावरण उत्साह से परिपूर्ण होने लगा था। कल ही प्रधानाचार्या से हमलोगों को सूचना मिल चुकी थी कि आज स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों के स्वागत का सौभाग्य हमलोगों को सुलभ होने वाला है। हमलोग उत्सुकता से उस घड़ी की राह देख रही थी, जब नव-भारत के निर्माण में नींव की ईंट बनने वालों के दर्शन मिलने वाले थे। वह घड़ी आ गई। अपराह्न का वह हर्षोत्पादक अवसर, उत्तर द्वार से खादी में सज्जित स्वतन्त्रता सेनानियों का जुलूस गंगा की पवित्र जलधारा की तरह महाविद्यालय में प्रवेश करने लगा। हमलोग पुलकित हो गईं। हम छात्राओं को यह सौभाग्य कहाँ उपलब्ध होता कि भारतीय स्वतन्त्रता के संग्राम में अपना सहयोग दे पाती! जिन दिनों स्वतन्त्रता का संग्राम चल रहा था, हमलोगों का जन्म भी नहीं हुआ था। हमारे इतिहास के शिक्षक ने निश्चय ही रोचक कहानी सुना दी थी।

अंग्रेजों के प्रभुत्व को निर्मूल करने में प्रारम्भ में भारत के अनगिनत नरों और नारियों ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी। विश्व में अंग्रेज नागरिकों की गणना श्रेष्ठ नागरिकों में आज हो रही है। आश्चर्य है, विश्व में सभ्यता की दृष्टि से श्रेष्ठ मानी जाने वाली अंग्रेज जाति में भारतीय सत्ता के शीर्ष स्थान पर आसीन होते ही बर्बरता और पाशविकता का नंगा नाच करने की प्रवृत्ति कैसे घर कर गई थी! एक ओर जालियाँवाला बाग, कलकत्ते की ब्लैक होल ट्रेजडी, मोतीहारी में निलहे साहब की बर्बरता और दूसरी ओर स्वतन्त्रताप्रेमी युवकों द्वारा काकोरी काण्ड, अजय पुल ध्वस्त करने की योजना, अनेक बम-काण्डों की योजना एवम् गांधी जी जैसे मनीषियों द्वारा सत्याग्रह, प्रदर्शन, अनशन, विदेशी वस्त्रों की होली, चरखा चक्र का प्रसार, कैदी जीवन की यातना आदि के तथ्यों से वर्गों में हमलोग अवगत हो गई थी।

ऐसे पवित्र संघर्ष में भाग लेने वालों के दर्शन से हम छात्राएँ कितना भाव-विभोर थीं, इसका वर्णन हमारी कलम की सामर्थ्य के बाहर की बात है। हमलोगों ने अनुभव किया—सेनापतियों के चेहरे पर उल्लास की लहर थी कि हम उनके दर्शन को एकत्र थीं। थोड़ी ही देर में मंच सेनानियों से भर गया। आस-पास भी बहुत से स्वतन्त्रता सेनानी आसीन हो गये। हमारी प्रधानाचार्या डा० रजनीबाला जी ने स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों के सम्मान

में स्वागत भाषण दिये। आपने इस महिला महाविद्यालय की स्थापना से विकास तक की कथा लोगों को सुनायी। अनेक बाधाओं, कठिनाइयों और उलझनों को झेलने के बाद महाविद्यालय इस रूप में आया कि नगर की स्त्री-शिक्षा का स्तर आज इतना स्वस्थ और उन्नत हुआ है। आपने अभ्यागतों से महाविद्यालय के लिए शुभ कामना की याचना की। प्रो० उदय नारायण तिवारी ने राष्ट्रिय गीत गाकर सेनानियों की आँखें नम कर दीं। अपने नगर में सर्व प्रथम डा० वैद्यनाथ झा ने इस बात पर खुशी जाहिर की कि भारत में सरकारी स्तर पर सेनानियों का रुपये, प्रमाण पत्र आदि से सम्मान तो होता रहता है पर नागरिकों की ओर से सेनानियों के लिए यह पहला अवसर है कि किसी संस्था ने उन्हें सम्मानित किया है। आपने महिला महाविद्यालय को सभी संभव सहायता देने का विश्वास दिलाते हुए घोषणा की कि इस महिला महाविद्यालय को अविलम्ब अंगीभूत कराने की दिशा में वे अपने सहयोगियों के साथ पहल करेंगे। भूतपूर्व शिक्षा मंत्री श्री दिगम्बर ठाकुर, श्री सुन्दर लाल बैठा, श्री शोभाकान्त झा, श्री रमाकान्त झा, श्री मोहन झा, श्री राधाकान्त झा, श्री मंगेरी लाल आदि महानुभावों ने अपने आशीर्वचन द्वारा महाविद्यालय परिवार को उत्साहित किया।

अभ्यागतों का चाय-पान के द्वारा सम्मान किया गया। अन्त में सेनानियों ने सभा-स्थल पर एक भव्य जुलूस निकाला। यह महाविद्यालय के इतिहास में पहला अवसर था कि स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों की इतनी बड़ी संख्या ने महाविद्यालय प्रांगण को पवित्र किया था। इनलोगों ने एक संकल्प पारित कर सरकार के शिक्षा विभाग से मांग की कि इस महाविद्यालय को अंगीभूत किया जाय। हमें यह लिखते बड़ी प्रसन्नता है कि यह महाविद्यालय इसी माह में अंगीभूत होने वाला है। हमारे अध्यक्ष श्री बलभद्र झा जी ने महिला महाविद्यालय के छात्रावास के उद्घाटनार्थ-शिलान्यास के अवसर पर इसकी सूचना देकर स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों के संकल्प की याद ताजा कर दी है।

इन पंक्तियों को लिखते समय एक बात लिखना मैं नहीं भूल पा रही हूँ कि आज भारत के स्वतन्त्र होने पर सत्ता की गद्दी पर जिन्हें बैठना चाहिये था उन्हें अनुकम्पा का पात्र बनाकर छोड़ दिया गया और जिन्होंने जेल क्या, कभी पुलिस की लाठी तक नहीं खायी, वे राष्ट्र नेता बने हुए हैं। यह विचित्र विडम्बना है। इस प्रसंग में मुझे याद आ रही है सीमान्त गाँधी श्री अब्दुल गफ्फार खाँ की वे बातें, जो अभी हाल की भारत यात्रा में उन्होंने कही थीं—'जो स्वप्न गुलामी के दिनों में उन्होंने देखे थे वे इतने वर्षों बाद भी चरितार्थ नहीं हो सके। भारत के गाँवों में आज भी पहले-सी गरीबी कायम है।' अन्त में मैं स्वतन्त्रता संग्राम में अपने जीवन के सभी सुखों की बलि देने वाले सेनानियों के प्रति श्रद्धा सुमनांजलि अर्पित कर रही हूँ जिन्होंने देश को तो संवारा ही, हमारे महाविद्यालय की हित-कामना से भी अपनी उदारता का परिचय दिया है।

•

हितोपदेश

जा, फिर से चूहा बन जा

रीता कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

किसी आश्रम में एक मुनि रहते थे। रोज सवेरे मुनि नदी में स्नान करके सूर्य की उपासना करते थे। आस-पास के गाँवों से भक्त आकर उनकी सेवा करते और उपदेश सुनते थे। एक दिन मुनि ध्यानमग्न बैठे थे। उसी समय एक चूहा ऊपर से गिरा। मुनि ने आँखें खोलीं। उन्होंने देखा कि किसी कौए के चंगुल से छूटकर एक चूहा गिर पड़ा है। मुनि को चूहे पर दया आ गई। उन्होंने उसे उठाकर अपनी कुटिया में रखा और चावल के दाने उसके सामने रख दिए। चूहा खुश होकर चावल खाने लगा। वह निडर होकर कुटिया में इधर-उधर घूमने लगा।

एक दिन एक बिल्ली आश्रम में आई। चूहे को देखकर उसके मुँह में पानी भर आया। वह झपटे, इसके पहले चूहा मुनि की गोद में छिप गया और गिड़गिड़ाकर बोला—'महाराज! बिल्ली मेरे प्राण ही ले लेगी। आप मुझे भी बिल्ली बना दीजिए, ताकि उससे मुझे डर न लगे।'

मुनि बड़े दयालु थे। उन्होंने मंत्र का पानी छिड़ककर चूहे को बिल्ली बना दिया। अब चूहा बिल्ली बनकर आराम से वहीं रहने लगा। बिल्ली को दूध-दही खाने को मिल जाता। कभी-कभी चूहों पर भी हाथ साफ कर लेती।

एक दिन आश्रम में कहीं से एक कुत्ता आ गया। कुत्ते को देखते ही बिल्ली की नानी मर गयी। वह भागकर मुनि की शरण में गई और बोली—'भगवन, यह कुत्ता मुझे खा जाएगा। कृपा करके मुझे भी कुत्ता बना दें।'

मुनि ने उसे बिल्ली से कुत्ता बना दिया। कुत्ता आश्रम की रखवाली करता था। पहले जब वह बिल्ली था तो कुत्ते से डरता था, अब बिल्ली उससे डरती थी।

संयोग से एक दिन कोई बाघ उधर आ निकला। कुत्ते ने उसे देखा तो सिट्टी-पिट्टी भूल गया, मानो यमराज ही सामने खड़े हों। पूँछ दबाकर पहुँचा मुनि के पास और गिड़गिड़ाकर बोला—'मुनिवर, बचाइए, यह बाघ मुझे खा जाएगा। इससे मुझे भय लग रहा है। आप मुझे भी बाघ बना दीजिए। मुनिवर कृपा कीजिए।'

मुनि ने कुत्ते को बाघ बना दिया। अब क्या कहना, उसका दिमाग तो सातवें आसमान पर पहुँच गया! खूब अकड़कर चलता, खाता और पीता। जंगल के अन्य जानवर उससे भय खाते। आश्रम में आनेवाले भक्त भी डर गए, पर मुनि ने हँसते हुए समझाया—इस बाघ से डरिए मत। यह तो चूहा है जो मंत्र के बल पर क्रमशः बिल्ली, कुत्ता और बाघ बना है।'

अब सब लोग उसके पास से बेखटके निकल जाते। बाघ को यह बहुत बुरा लगता। उसने सोचा कि जबतक मुनि जीवित हैं, लोग मुझे चूहा ही समझेंगे। क्यों न मैं इनको ही मार डालूँ !! न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। बस, ऐसा सोचकर वह मुनि पर झपटा। मुनि सावधान थे। उन्होंने तत्काल मंत्र का जल छिड़कते हुए कहा—'जा, तू फिर से चूहा बन जा।' कहने भर की देर थी। बाघ चूहा बनकर अपने असली रूप में आ गया।

सन्देश : अयोग्य आदमी ऊँचे पद पर पहुँचकर अभिमानी बन जाता है। हमें बड़ा बनकर भी विनम्र रहना चाहिए।

●

बेवक्त की शहनाई

जाड़ा आया

ममता कुमारी झा
प्रथम वर्ष विज्ञान

अब कम्बल बेकार हो गए,
अच्छी लगे रजाई,
जाड़े की ऋतु आई।
पहने रंग-बिरंगे सबने इस मौसम में स्वेटर,
फिर भी जाड़ा खूब कँपाता, काँप रहे सब थर-थर।
ठंडा-ठंडा नल का पानी
लगता है दुखदाई।
होती गरम देर से अब तो चूल्हे-चढ़ी पतीली,
करता है कुहरा मनमानी, हवा हुई बर्फीली।
लस्सी से सब को डर लगता,
गरम चाय मन भाई।

●

मूक समर्पण

अलका रानी
(षष्ठ वर्ष हिन्दी)

"मलयज, थोड़ी देर यहीं बैठो न, थक गई हूँ" पहाड़ी पर चढ़ते हुए माधवी ने कहा।

"थक गई हो तो चलो, लौट चलें।"

"प्रकृति के प्रांगण में, इसकी गोद में, पता नहीं, कब आ पाऊँगी! सचमुच देखो तो मलयज, प्रकृति कितनी सुन्दर लग रही है! चाँदनी रात में दूर-दूर तक फैली हुई ये शैल श्रेणियाँ ऐसी लग रही हैं, मानो क्षीर-सागर में बाल बंधी मानों मौन स्तब्ध खड़ी प्रकृति की शोभा को निहार रही हों।"

"माधवी! क्या यह नहीं हो सकता कि यह पल यहीं रुक जाये जिस पल ने जीवन की सारी खुशियों को समेट रखा है। प्रकृति की निराली छटा है जिसकी गोद में केवल मैं हूँ, तुम हो और असंख्य मधुमय बातें हैं जो उमड़-घुमड़ रही हैं मन में बादलों की तरह।"

माधवी का सर मलयज की गोद में था और मलयज की पतली-पतली, लम्बी-लम्बी उंगलियाँ उसके बालों के साथ अठखेलियाँ कर रही थीं। आँखें बन्द किये माधवी पहुँच गई अतीत की गोद में। याद आया उसे कि मलयज से उसका थोड़ा परिचय था। वह परिचय भी अनजाने ही पढ़ाई-लिखाई के सिलसिले में पनपता चला गया। मलयज उसकी सरलता और भोलापन पर मुग्ध था। कितनी निश्छल थी माधवी कि जगत के एक कठोर सत्य से अपरिचित और अनजान थी। यही भोलापन तो उसे अपनी ओर खींचता चला गया। कहीं कोई बनाव-शृङ्गार नहीं, उलझी हुई लट, अस्त-व्यस्त-से कपड़ों में जो नैसर्गिक शरीर-सौन्दर्य था, उसका पान कर रहा था मलयज और माधवी उसकी इस भावना से भी बिलकुल अपरिचित।

याद आया उसे—गर्मी के दिन थे। मलयज ने पूछा था—"माधवी, एक नाटक में भाग लोगी?"

माधवी खामोश हो गई थी कि क्या जवाब दूँ। फिर झिझकते हुए उसने भी पूछा था—"मुझसे हो पायेगा?"

"अरे, उसमें करना क्या है! याद कर लेना है और दर्शकों के सामने कह देना है।"

नाटक का क्या नाम था—उसे स्मरण नहीं, पर नायक बना था मलयज और नायिका थी माधवी। उसके बाद तो न जाने, कितने ही नाटकों में उन दोनों ने भाग लिये; जैसे—"मुद्राराक्षस", "आषाढ़ का एक दिन", "स्कन्द-गुप्त", "चन्द्रगुप्त" आदि।

उसे याद आया वह क्षण, जिस क्षण में मलयज ने उससे 'चन्द्रगुप्त' नाटक की नायिका कार्नेलिया का अभिनय करने का अनुरोध किया था।

न जाने क्या सोचकर उसने कहा था—
"कार्नेलिया का अभिनय सुन्दर नहीं हो पायगा। सेहा उसे सुन्दरता से कर सकती है।"
"अच्छा, तो तुम कौन-सा रोल अदा करोगी ?"
"ठीक है, समय आने पर बता दूँगी" माधवी का उत्तर था।

माधवी ने कहा था—"आप कह रहे हैं तो मैं मालविका का रोल अदा कर सकती हूँ।"
मलयज को एक धक्का-सा लगा। जीवन में सभी सुखों की सुविधा रहते भी माधवी का मालविका का रोल वह समझ नहीं सका। लगा, उसके अन्तर्मन में कहीं निराशा घर कर बैठी है। वह पूछ उठा -"क्यों माधवी, क्या कार्नेलिया बनना तुम्हें पसन्द नहीं ?"

"यह तो अपनी इच्छा है कि कोई रोल आदमी को अधिक पसन्द पड़ता है तो कोई कम। इसके लिए कोई तर्क नहीं दे सकता है।"
"नहीं माधवी, तुम्हें यह अभिनय नहीं करना है।"

"आप कह रहे हैं कि मैं कार्नेलिया बनूँ, तो उसमें वह स्वाभाविकता नहीं आ पायेगी और अस्वाभाविक अभिनय तो अभिनय नहीं है। आज तक हमने जो भी ख्याति पायी है वह सब मिट्टी में मिल जायेगी। याद होगा आपको जब 'स्कन्दगुप्त' नाटक में देवसेना की एक छोटी-सी भूमिका में मैं आई थी। शायद ही कोई व्यक्ति होगा जिसकी पलकें नम नहीं हो गई हों। कितना स्वाभाविक था वह अभिनय ! उस एक नाटक में ही हमको कितनी ख्याति मिली थी !"

मलयज पूछ उठा—"तुमने देवसेना की भूमिका क्यों पसन्द की ?"

थोड़ी देर मौन रहकर माधवी ने उत्तर दिया था—"जिस पात्र में जीवन की कुछ झलक प्रतिबिम्बित हो उठती है, वहीं तो स्वाभाविकता आ पाती है।"

उसके इस तर्क को सुनकर मलयज मौन बन गया था और वह मालविका की एक छोटी-सी भूमिका में आई थी। सचमुच मालविका के अभिनय में उसे आशातीत सफलता मिली थी। लोगों ने भी जी भर कर प्रशंसा की थी। कितनी ही बधाइयाँ दी गई थीं, कितने ही प्रशंसा-पत्र आये थे उसके पास।

हाँ, सचमुच ही तो मालविका के अभिनय में माधवी ने अपने अस्तित्व को भुला-सा दिया था मानो वह वास्तविक मालविका बनकर ही रंगभूमि पर उतर आई थी।

मालविका और माधवी दोनों के जीवन में सचमुच कुछ ऐसा सामंजस्य रहा होगा, जिसने माधवी को प्रेरित किया था मालविका की भूमिका अदा करने के लिये।

मालविका के जीवन में था क्या ? एक सम्पूर्ण समर्पण की भावना, एक स्पृहाहीन त्याग; यहाँ तक कि अपने जीवन को भी अपने सर्वस्व की सुख-शान्ति के लिए सहज ही समर्पित कर दिया था उसने। हाँ, सच ही

तो, प्रेम का अन्तिम रूप बलिदान होता है। मालविका कहती है—'जीवन एक प्रश्न है, और मरण है उसका अटल उत्तर।" यह भावना ही तो मालविका के निश्छल प्रेम की पराकाष्ठा थी। फिर क्या हुआ था? माधवी, जो मालविका के रूप में दर्शकों के समक्ष आई थी, की मृत्यु पर चन्द्रगुप्त बने मलयज का हृदय हाहाकार कर उठा था और उसकी आँखों से अविरल अश्रुधारा बह चली थी। अभिनय अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था।

"क्या सो गई, माधवी?"—मलयज की आवाज ने उसे अतीत से हटाकर वर्तमान के धरातल पर खड़ा कर दिया।

"नहीं, जगी तो हूँ"—माधवी का स्वर था।

"तो चलो घर चलें, रात गहरी हो चली है"—मलयज ने उठते हुए कहा। माधवी को मौन देखकर मलयज पूछ बैठा—तुम कुछ सोच रही हो?"

"नहीं तो" माधवी ने कहा।

"बिलकुल झूठ। बोलो, क्या सोच रही हो?"

"मलयज, देखो इन पहाड़ी रास्तों को, इनके उतार-चढ़ावों को। कितने टेढ़े मेढ़े, कितने उलझे हुए हैं ये रास्ते! ठीक ऐसा ही तो हमारा जीवन भी है। न जाने, कितने उतार-चढ़ावों से भरा हुआ, मकड़ी के जालों की तरह उलझा हुआ भी।"

बातों ही बातों में रास्ता कब तय हो गया, नहीं मालूम। दो चार मिनट का ही रास्ता था, तभी निर्देशक डा० घोष से मुलाकात हो गई।—"अभी अभी तुम्हारे ही घर से आ रहा हूँ। क्या निर्णय लिया है तुमलोगों ने "अम्बपाली" नाटक के बारे में? मलयज तो नायक यानी अरुणध्वज बनेगा ही और मेरे विचार से माधवी के सहयोग से अम्बपाली का अभिनय पूर्ण हो जायगा।

'क्यों माधवी, अम्बपाली की भूमिका पसन्द न है? बोलो, चुप क्यों हो?' पूछा था मलयज ने।

"अम्बपाली का अभिनय मेरा सफलता-पूर्वक कर सकती है।"—फिर उत्तर दिया उसने। "ठीक है, पर तुम कौन सा रोल अदा करोगी?"—डाक्टर घोष ने प्रश्न किया। कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा था—"मधूलिका का।" इस छोटे से उत्तर में छिपी थी उसके जीवन की सारी कटुता। "ठीक है, तो मैं चलूँ"—डा० घोष ने कहा। एक साथ दोनों के हाथ जुड़ गये अभिवादन में। वे आगे बढ़ गए।

मलयज सोच रहा था, कारण क्या है कि अहर्निश हँसती खिलखिलाती हुई माधवी को दर्दों से इतना लगाव है। आज भी वही हुआ जिसका उसे डर था। माधवी ने मधूलिका का ही अभिनय पसन्द किया, जिसने जीवन में कभी सुख नहीं देखा, जिसने वह सब कुछ चुनकर ओढ़ लिया है जिसे दुनिया दुख कहती है। मधूलिका—जिसे रोने का भी अधिकार नहीं शायद।

"क्या आप कुछ सोचने लगे ?"—माधवी ने पूछा।

"नहीं तो, सोचूँगा क्या ?"—प्रश्न का उत्तर उसने प्रश्न से ही दिया।

"आपने फिर छिपाया। मैं बताऊँ, आप सोच रहे थे कि मैंने मधूलिका का अभिनय ही स्वीकार क्यों किया।"

"हाँ, यही सोच रहा था"—मलयज के मुख से एक ठंडी आह निकल पड़ी।

"मलयज, सच कहूँ, मुझे ऐसे पात्रों से इतना लगाव क्यों है, क्योंकि मेरी परिस्थिति और मेरी प्रकृति भी इन्हीं पात्रों जैसी है। साथ ही वह ऐसे निश्छल प्रेम की पुजारिन रही है जिसका अंत होता है बलिदान में और स्वरूप होता है वरदान का। आशावादी बनकर जब निराशा हाथ लगे तो दुख होता है, लेकिन जिसने जीवन के अंधकारों को ही अपना सर्वस्व, अपना जीवन मान लिया है, उसे प्रकाश नहीं मिलने पर अकुलाहट नहीं होती, असंतोष नहीं होता, क्योंकि वह अपने इसी जीवन से संतुष्ट रहती है।"

"माधवी, आज जो बादल घिर आए हैं, अंधकार ने अपना आधिपत्य जमा लिया है, ये हमेशा ही ऐसे नहीं रहेंगे, बल्कि खुशी का सूर्य भी अपने प्रकाश को लेकर उदित होगा। तब जीवन में छाए अंधकार के बादल सदा के लिए छँट जाएँगे।"

"मलयज, कब क्या होगा, कौन जानता है! जो कल बीत चुका, उसके लिए तो हम मर चुके हैं; और आनेवाले कल के लिए हम पैदा ही कहाँ हुए हैं! यह पल, यह क्षण जिसमें हम जी रहे हैं, यही वास्तविकता है और यही हमारी जिन्दगी है।"

आँसुओं के लोक में बसी माधवी की जिन्दगी फिर उन्हीं आँसुओं के निकट पहुँच गई जिनने हर पल उसे सहारा दिया था। धीरे-धीरे माधवी के कदम तेज होते चले गए और उसकी पदचापें मलयज के कानों से टकराती रहीं।

●

कभी नहीं अस्त होने वाला दिनकर

अर्चना रानी

तृतीय वर्ष

साहित्याकाश के दिनकर के काव्य में यद्यपि विद्यापति की शृंगारिकता, भूषण की ओजस्विता एवं तुलसी की लोकमंगलवादी चेतना का अनूठा समाहार है, परन्तु यह बात सभी को स्वीकारनी पड़ती है कि दिनकर ने परम्परा से बहुत थोड़ा लिया है। जो कुछ है, उनका अपना है—अपना चिन्तन, अपना आदर्श। यह बात अलग है कि उनकी समस्त काव्य साधना छायावाद की प्रतिक्रिया के रूप में पनपी है।

हिन्दुस्तान के भाग्याकाश में जब-जब विपत्ति के बादल मँडराते दीख पड़े हैं, तब-तब शारदा के सपूतों ने देश के वीरों का साथ दिया है, उनकी तलवारों की झंकार में वाणी का सशक्त स्वर मिला दिया है। पददलित मानवता के लिये हृदय में व्याकुलता की आग जलाने वाले हिन्दी के जितने कवि हुए उनमें दिनकर का नाम आदर से लिया जाता है। यद्यपि दिनकर का स्थूल शरीर सरकारी बन्धनों में जकड़ा हुआ था, तथापि उनका मन उन्मुक्त था, लेखनी स्वतन्त्र थी, बन्धनों के बीच रहकर भी उनकी वाणी निर्भीक थी—जिसकी लेखनी कभी रुकी नहीं, जिसका उत्साह कभी धूमिल हुआ नहीं; इस देश में उन्हें जो भी अर्घ्य देना पड़ा, सहर्ष देते रहे।

दिनकर के काव्य ने उस समय जन्म लिया, जब छायावाद अपनी अतिशय कल्पनाशीलता के कारण सुसुप्तावस्था में पहुँच गया था। जन मानस में जागता हुआ स्वाधीनता का उद्दाम वेग छायावाद के महावर-रंजित चरणों पर विश्वास नहीं कर सकता था, जागृति के उमड़ते हुये ज्वार को शान्त होने का अवकाश नहीं था, जनरुचि रेशमी धोती से ऊबकर अब खादी परिधान की उपासिका बन चुकी थी। ऐसे ही समय में दिनकर ने क्रान्ति की एक मशाल जलायी, जिसका नाम पड़ा-प्रगतिवाद।

दिनकर के काव्य में ओज की प्रधानता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"सुनूँ क्या सिन्धु मैं गर्जन तुम्हारा,
स्वयं युगधर्म का हुंकार हूँ मैं।"

एक ओर "धूप-छाँह' में कवि के बाल-जीवन के दर्शन होते हैं तो दूसरी ओर 'रसवन्ती' में कवि का यौवन दमक उठा है, और जब कवि प्रौढ़ावस्था को प्राप्त करता है; तो समाज की विषमताओं को देखकर जो वाणी उद्गीत होती है, उसी का संकलन "हुंकार" में देखने को मिल जाता है। एक ओर 'उर्वशी' कवि के उर में बसी हुई है, वहीं दूसरी ओर 'द्वन्द्व-गीत' में कवि ने अपने जीवन का सुन्दर द्वन्द्व प्रस्तुत किया है। 'हुंकार' में कवि स्वयं अपने बारे में लिखता है—

"मैं दिवा-पुत्र, जागरण-गान है मेरा,
जग को अक्षय आलोक दान है मेरा।"

कली की पंखुड़ियों पर चमकते हुए ओस-कण में कवि रंगीले स्वप्नों का संसार बसाता है, परन्तु जब वह वास्तविकता के धरातल पर आता है तो उसकी चिर सहचरी मिट्टी ही उसका आह्वान करती है—

"जलन हूँ, दर्द हूँ, दिल की कसक हूँ
किसी का हाय, खोया प्यार हूँ मैं!
गिरा हूँ भूमि पर नन्दन-विपिन से,
अमर तरु का सुमन सुकुमार हूँ मैं।"

कवि की रचना 'द्वन्द्वगीत' का प्रत्येक छन्द अपने में एक गूढ़ भाव छिपाये है—

"पत्थर ही पिघला न, कहो,
करुणा की रही कहानी क्या?
टुकड़े दिल के हुए नहीं,
तब बहा दृगों से पानी क्या?"

'रसवन्ती' में प्रेम रस की निर्झरिणी फूटी है। 'रसवन्ती' में उनका प्रेम उमड़ कर समस्त हृदय प्रदेश में छा जाता है और वे मस्त होकर झूमने लगते हैं। 'साकी' शीर्षक कविता में कवि ने जो लिखा है उसमें हालावाद की स्पष्ट झाँकी देखने को मिलती है—

"और और मत पूछ, दिये जा,
मुँह माँगा वरदान लिये जा।
तू, बस, कह इतना ही साकी,
और पिये जा और पिये जा।"

इनकी एक रचना है—'नील कुसुम', जिसमें कवि प्रगतिवाद से हटकर रहस्यवाद के धरातल पर पहुँच जाता है। कवि की भाव धारा कभी कल्पना में विचरण करती है तो कभी विद्रोहात्मक यथार्थ का रूप धारण कर लेती है—

"है यहाँ तिमिर, आगे भी ऐसा ही तम है,
तुम नीलकुसुम के लिए कहाँ तक जाओगे?
जो गया, आज तक नहीं कभी वह लौट सका,
नादान मर्द! क्यों अपनी जान गँवाओगे?"

दिनकर ने प्रेम और सौन्दर्य को अपने काव्य में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। कवि ने स्पष्ट घोषणा की है कि जीवन और यौवन जीने के लिये आवश्यक है—

"मैं न रहूँगा इस भूतल पर,
जीवन, यौवन, प्रेम गँवा कर।"

दिनकर की सर्वोत्कृष्ट कृति है—'उर्वशी'। 'उर्वशी' की नायिका असाधारण रूप और असाधारण गुण लेकर उपस्थित हुई है—

"दर्पण जिसमें प्रकृति रूप अपना देखा करती,
वह सौन्दर्य कला जिसका सपना देखा करती।
नहीं, उर्वशी नारी नहीं,
आभा है निखिल भुवन की,
रूप नहीं, निष्कलुष कल्पना
है स्रष्टा के मन की।"

प्रकृति-वर्णन में भी कवि पीछे नहीं रहा है। प्रकृति के कण-कण में एक संगीत है जिसके कारण वह सौन्दर्य-निधि बन गई है और उसके प्रत्येक अंग से निर्झर बहता है, परन्तु वह दृश्यमान तभी होता है जब उसे देखने के लिए सहृदय की आँखें विद्यमान हों।

प्रकृति के सुरम्य प्रांगण में पलकर मनुष्य प्रकृति को कैसे भूल सकता है ! फिर, कवि का क्या कहना, वह तो कल्पना तथा सौन्दर्य का सुकुमार स्रष्टा होता ही है। कवि की दृष्टि से न तो उषा की अरुणिमा ही कोमल हो पाती है और न चाँदनी रात ही। वह लिखता है—

"दूर-दूर तक फैल रही है दूबों की हरियाली,
बिछ‌ी हुयी इस हरियाली पर शबनम की है जाली।
खुली चाँदनी में शोभा मिट्टी की भी जगती है,
कभी-कभी यह धरती भी कितनी सुन्दर लगती है!"

सौन्दर्य-प्रेमी दिनकर ने नारी को कितने रूपों में देखा है, यह इस पंक्ति से स्पष्ट है—
"सत्य ही रहता नहीं यह ज्ञान, तुम कविता, कुसुम या कामिनी हो।" प्रेम के क्षेत्र में भी दिनकर को कम सफलता नहीं मिली है। प्रेम की जितनी सरल और सहज अभिव्यक्ति दिनकर ने की है, उतनी अन्यत्र दुर्लभ है—

कहते हैं सब रोगों से कठिन प्रणय है,
लगता है यह जिसे उसे फिर नींद नहीं आती,
दिवस रुदन में, रात आहें भरने में कट जाती।
मन खोया खोया, आँखें कुछ भरी-भरी रहती हैं,
भींगी पुतली में कोई तस्वीर खड़ी रहती है।"

ये हैं दिनकर के भावुक हृदय की कोमल भावनाएँ, जो कभी 'उर्वशी' में तो कभी 'रसवन्ती' में निखर उठी हैं। इनके गीतों में कहीं-कहीं छायावाद की भी झलक देखने को मिल जाती है। जिसके प्राणों में बारूद हो उसके लिये एक चिनगारी ही काफी है। दिनकर के भीतर तो बारूद का एक भण्डार ही पड़ा था। एक-एक चिनगारी से उसमें विस्फोट होता जिसके परिणाम थे "कुरुक्षेत्र", "हुंकार"। दिनकर ने अपने काव्य-जीवन में पहले प्रेम का स्पर्श किया है, फिर चिन्तन का—

"पहले प्रेम का स्पर्श होता,
तदन्तर चिन्तन भी।
प्रणय प्रथम मिट्टी कठोर है,
तब वायव्य गगन भी।"

प्रगतिवाद वास्तव में खड़ी बोली के काव्य-साहित्य का वह स्वर्णिम युग था जहाँ राष्ट्रीय कविता की ओजमयता, छायावादी कविता की भावुकता और रहस्यवादी भावधारा की रहस्यमयता का दुर्लभ संगम सम्भव हुआ था। जहाँ और कवियों के शब्द द्रुत या विलम्बित गति से चलते थे, वहीं दिनकर के शब्द बहते थे झंझावात से। दिनकर के काव्य में पुरातन की स्मृति है, वर्तमान की कसक तथा पीड़ा भी है और साथ ही भविष्य की आशाएँ भी। दिनकर के काव्य में उद्दाम यौवन की उमंग है, स्वाधीन होने की प्रबल आकांक्षा है और तूफान, आँधी आदि से सामना करने की लालसा भी। दिनकर की एक ओजमयी वाणी का उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है—

'पहली सीख यही जीवन की,
अपने को आबाद करो।
बस न सके दिल की बस्ती
तो आग लगा बर्बाद करो।"

दिनकर के व्यक्तित्व में एक राजसी गुण का प्राबल्य था। दिनकर के काव्य में एक सादगी और एक सहज स्वाभाविकता है जो अन्यत्र दुर्लभ है। दिनकर ने लिखा है—

'हरा भरा रह सका नहीं है,
यहाँ किसी का बाग अभी।
यहाँ सदैव जला करती है,
सर्वनाश की आग अभी॥"

निराला के शब्दों में—"यह कितना समीचीन है कि हिन्दी जगत के पूर्वांचल में पहले 'प्रभात' आया, फिर 'दिनकर' का भी उदय हुआ।" यहाँ यह पंक्ति दिनकर के काव्य जीवन पर प्रकाश डालने के लिये उपयुक्त बैठती है कि "मेघ गर्जन सुनकर कानन-सम्राट शार्दूल गुर्राहट भरी अंगड़ाई लेने लगता है कि उसके रहते यह कौन है जो दहाड़ने की हिमाकत कर रहा है।

लेकिन आज ऐसा लगता है कि हिन्दी साहित्याकाश में दिनकर के डूबते ही अन्धकार छा गया है। केसरी जी ने भी लिखा है—"१९७४ के अप्रैल मास की २४ तारीख—जिस दिन प्रकृति का दिनकर तो उगा, लेकिन हिन्दी साहित्याकाश का 'दिनकर' सदा के लिये डूब गया। मौन था दिनकर का वह पाञ्चजन्य, जिसके मर्मस्पर्शी निनाद से भारत वसुन्धरा कई दशकों से उल्लसित एवम् आन्दोलित हो रही थी।"

पता नहीं, इन नवयुग लेखकों में दिनकर की-सी काव्य प्रतिभा आ सकेगी या नहीं! जीवन का सारा रस तो उन्होंने अपने साहित्य को अर्पित कर दिया था। ऐसे ही सरस्वती पुत्रों पर तो हम काव्य-प्रेमियों को गर्व होता है और होता रहेगा, क्योंकि दिनकर ने समाज को देखा था, उसकी भावनाओं को परखा था और उसकी परिस्थितियों के अनुसार ही अपने काव्य को मोड़ डाला था। ऐसे ही साहित्यकार समय की धूल में अपने पदचिह्नों को छोड़ जाते हैं जिन पर आने वाली पीढ़ी चल सके।

●

अतीत का गीत दुहराने से कुछ नहीं होता। हम वर्तमान को देखें और भविष्य की चिन्ता करें।

—बेनीपुरी

कविताएँ

कन्या दिलवाइए

सुनयना कुमारी

प्रथम वर्ष कक्षा

एक हिप्पी-कट भक्त ने
भगवान की बड़ी पूजा की—
उनकी मूर्ति के आगे खड़ा रहा,
जब तक प्रभु प्रसन्न न हुए,
एक पैर पर खड़ा रहा।
भगवान को
भक्त की भक्ति का कर्ज
चुकाना पड़ा,
मजबूरन सामने आना पड़ा।
बोले—'भक्त, हम प्रसन्न हुए
तेरे सामने खड़े हैं।
इस समय जान ले,
जो तेरी इच्छा है,
एक वर माँग ले।'
भक्त बोला—'प्रभु,
मेरे बेलबॉटम ड्रेस
और हिप्पीकट बाल देखकर
धोखा मत खाइए,
'वर' तो मैं खुद हूँ,
एक कन्या दिलवाइए।'

पहले परीक्षा दीजिए

रानी कुमारी

प्रथम वर्ष कक्षा

उठो, छात्र, अब आँखें खोलो,
खड़ी परीक्षा दरवाजे पर।
आयी है वह नहीं लौटने,
स्वागत उसका करो विहँसकर।
पढ़ो एकटक ध्यान लगाकर,
समय कीमती समझो अपना,
व्यर्थ गवाँओ समय न थोड़ा,
है साकार बनाना सपना।
मित्र किताबों को तुम मानो,
और कलम को साथी जानो,
श्रम से ही तो फल मिलता है,
आलस की मत चादर तानो।
त्याग और तप के प्रभाव से
बड़ा सिंहासन डोल गया है।
जिसने खोजा, उसने पाया—
दास कबीरा बोल गया है।
यही जानकर चलो कि तुमको
पास नहीं केवल करना है,
श्रम से, गुरु के आशिष से
इतिहास मुझे नूतन गढ़ना है।

भोलाराम का जीव

व्यंग्यकार : हरिशंकर परसाई

रूपान्तरकार : सुनीता कुमारी

चतुर्थ वर्ष कला

पात्र-पात्रा :

धर्मराज	चित्रगुप्त	बड़े साहब
नारद	यमदूत	स्त्री

(धर्मराज यमलोक में सिंहासन पर विराजमान—सामने चित्रगुप्त रजिस्टर खोले हुए—आँखें रजिस्टर के पृष्ठों पर ।)

धर्मराज-ऐसा कभी नहीं हुआ था, मेम्बर ! हम लाखों वर्षों से आत्माओं को स्वर्ग या नरक में क्वार्टर अलॉट करते आ रहे हैं, और वह भी सोर्स और फोर्स के आधार पर नहीं, बल्कि सुकर्म और कुकर्म के आधार पर. लेकिन ऐसा तो कभी नहीं हुआ था ।

चित्रगुप्त-महाराज, गलती तो गेस क्वेश्चंस की तरह पकड़ में नहीं आ रही है। मैंने तो सारा रिकार्ड वैसे ही छान मारा जैसे धरती पर इक्जामिनेशन के एक दिन पहले कॉलेज के स्टूडेंट्स गेस पेपर एवं गाइड के लिए पुस्तक केन्द्र छान मारते हैं, परन्तु मास्टर भोलाराम की आत्मा का कहीं पता नहीं चल सका । पिछली तीस फरवरी को ही उसने शरीर त्यागा और यमदूत के साथ हेलीकोप्टर द्वारा इस लोक के लिए रवाना भी हुआ, लेकिन वह भारतीय रेल एवं डाक की तरह समय पर यहाँ नहीं पहुँच सका । आश्चर्य है ! सचमुच ऐसा तो कभी नहीं हुआ था ।

धर्मराज-और वह दूत कहाँ है ?

चित्रगुप्त-महाराज, वह दूत भी सचिवालय के बाबुओं की तरह लापता है ।

(बदहवास-सा यमदूत का प्रवेश-चेहरा परेशानी एवं भय के कारण विकृत—हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता है ।)

धर्मराज-अरे, तू दफा ३०२ के क्रिमिनल की तरह कहाँ छिपा रहा इतने दिन ? और मास्टर भोलाराम की आत्मा कहाँ है ?

यमदूत-दयानिधान, विश्व का आठवाँ आश्चर्य हो गया ! मैं आत्माओं को लाते-लाते बूढ़ा हो गया, परन्तु आज तक धोखा नहीं खाया । मेरे हाथों से हमेशा सच बोलनेवाले वकील नहीं छूटे, ऑपरेशन टेबुल पर रोगियों को लिटा-कर दुगुनी-तिगुनी रकम वसूलनेवाले सर्जन

नहीं छूटे, कॉलेजों में क्लास छोड़कर गप्प लड़ानेवाले लेक्चरर नहीं छूटे और बिना रसीद का चन्दा लेनेवाले नेता नहीं छूटे, लेकिन यह साधारण मास्टर मुझे फिल्म के डायरेक्टर की तरह उल्लू बना गया! महाराज मैंने सात सेल की टार्च लेकर सारा ब्रह्मांड छान मारा, परन्तु भोलाराम की एब्सकौंडिंग आत्मा का पता नहीं चल सका। मुझसे भूल हुई, महाराज। एक्सक्यूज़ मी।

धर्मराज (क्रोध से) मूर्ख! तुझे पता नहीं कि यह मर्त्यलोक नहीं, यमलोक है। यहाँ भूल करनेवालों को क्षमा नहीं की जाती। जाओ, आज से तुम अनिवार्य सेवा-निवृत्त हुए। (चित्रगुप्त की ओर देखकर) चित्रगुप्त, इसके कम्पलसरी रिटायरमेंट का आर्डर अभी ईश्यू करो।

चित्रगुप्त—महाराज, दूत की यह पहली भूल है। इसे क्षमा कर दें। और यदि भोलाराम की आत्मा गायब हो ही गई तो इसमें इस बेचारे का क्या दोष! आजकल पृथ्वी पर से तो हर चीज ही गायब हो रही है, यहाँ तक कि बाबा कबीर का ढाई आखर वाला 'प्रेम' भी गायब हो रहा है। और मान लीजिए कि आपने दूत की छँटनी कर ही दी और रीएक्शन में यदि सारे यमदूतों ने अपनी यूनियन बना ली, तो इसका रिज़ल्ट क्या होगा, यह भी सोचा है आपने?

धर्मराज—चित्रगुप्त, लगता है, तुम्हारी भी रिटायर होने की उम्र आ गई है। जाओ, अपने दिमाग का एक्स-रे करवाओ।

(तभी नारद का प्रवेश)

नारद—नारायण, नारायण! धर्मराज, मिस्टर चित्रगुप्त के दिमाग का कौन-सा पार्ट लूज़ हो गया है? और आप चिन्तित क्यों हैं? क्या नरक में आवास की समस्या अभी तक हल नहीं हो सकी?

धर्मराज—नहीं मुनिवर, बात ऐसी नहीं है। नरक में आवास की समस्या तो कभी की हल हो गई। नरक में पिछले दिनों कई कुशल कारीगर पहुँच गए हैं। वहाँ कई ठेकेदार पहुँच गए हैं जो बिना सिमेंट के भी केवल बालू से ही बड़े-बड़े पुल और भवन खड़े कर देने में निपुण हैं। वहाँ बड़े-बड़े इन्जीनियर भी पहुँच गए हैं जो ठेकेदारों से पर-सेंटेज लेकर सरकारी धन बिना पच-नोल के ही हजम कर जाने में माहिर हैं। वहाँ काफी ओवरसीयर भी पहुँच गए हैं जो साइट पर बोगस मजदूरी का ऑरिजनल पेमेंट बना कर मजदूरी खुद खा कर लेने की तरकीब जानते हैं। इनलोगों ने मिल-जुलकर नरक में आवास की समस्या तो हल कर दी है, लेकिन मेरी चिन्ता का कारण कुछ और ही है।

नारद-वह क्या महाराज ?

धर्मराज-समस्या जनसंख्या की समस्या से भी विकट है, मुनिवर। बात यह है कि पाँच दिन पूर्व एक मास्टर भोलाराम का नेचुरल डेथ हो गया। उसकी आत्मा को लेकर यमदूत यहाँ आ रहा था, परन्तु आत्मा प्राइवेट कॉलेज के लेक्चरर की तरह यहाँ ज्वाइन करने से पूर्व ही फ्रेंच लीव में चली गई। अब आप ही कोई उपाय ढूंढिए, मुनिवर ! आप तो एंटीबायटिक की तरह हर मर्ज की दवा हैं।

नारद- ठीक है, धर्मराज। ट्राई करता हूं। अच्छा, एक बात बतलाइए। उस मास्टर पर इनकम टैक्स तो बकाया नहीं था ? हो सकता है, इनकम टैक्स-वालों ने लाकर में उसकी आत्मा को ही डिटेन कर रखा हो।

धर्मराज- आप भी बुद्धिजीवियों की तरह बातें करते हैं, मुनिवर। अरे, बेचारे को इनकम होगी, तब तो टैक्स होगा ! वह तो भुखमरा था, रिटायर्ड था न।

नारद- केस तो जासूसी उपन्यास की तरह इंटरेस्टिंग लगता है। काफी सस्पेंसिव है। खैर, मैं पृथ्वी पर जाता हूं। सी० बी० आई० की तरह मामले की छान-बीन करूँगा। ('नारायण-नारायण" बोलते हुए नारद का प्रस्थान।)

दृश्य-२

नारद-नारायण-नारायण ! अन्दर कोई है ?

(एक स्त्री का प्रवेश)

स्त्री-प्रणाम महाराज। क्या चाहिए आपको ? मैं तो अभी कुछ नहीं दे सकती, क्योंकि…

नारद-(बीच ही में बात काटते हुए मुझे कुछ चाहिए नहीं माता। मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि भोलाराम आखिर मर क्यों गए ? कैसा रोग था उन्हें ?

स्त्री- गरीबी की बीमारी थी प्रभु। सौ-डेढ़ सौ दरख्वास्तें देने के बाद भी पेंशन की फाइल मधुबनी के महिला कालेज की कैंटीन की तरह बन्द ही रही। कोई रोजी नहीं रहने से रोजा ही चल रहा था कि वे ……
(रोने लगती है)

नारद-धैर्य रखो, माता, धैर्य रखो। मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। अच्छा, तुम बता सकती हो कि वे किस लेन की ……मेरा मतलब है वे किस विषय के टीचर थे ?

स्त्री-मैथिली के थे, प्रभु। लेकिन टो-टाकर अंग्रेजी भी पढ़ा लेते थे।

नारद-अच्छा माता। मैं देखता हूं।
('नारायण,नारायण' कहते हुए प्रस्थान।)

दृश्य—३

(बड़े साहब कुर्सी पर बैठे हुए टेबुल के सहारे लेटे हैं। सामने दूसरी कुर्सी पर नारद।)

बड़े साहब-हूँ, तो आप मास्टर भोलाराम की पेंशन की दरख्वास्तें खोजने आए हैं।

लेकिन साधुजी, आप बिना विजिटिंग कार्ड के अन्दर पहुँच गए। इसका मतलब यह हुआ कि गेट का चपरासी स्टूल पर ऊँघ रहा होगा। खैर, यह तो ऑफिस का कायदा है। यह बतलाइए कि भोलाराम की दरख्वास्तों पर आप कुछ वजन रख सकते हैं? बिना वजन के उनकी दरख्वास्तें उड़ रही हैं।

नारद–बड़े साहब, दरख्वास्तें उड़ रही हैं, लेकिन इतने सारे पेपरवेट तो हैं टेबुल पर!

बड़े साहब–ऊँह, आप समझे नहीं। अरे भई, यह दफ्तर भी वैसा ही स्थान है जैसा आपका मंदिर होता है। यहाँ भी दान-पुण्य करना पड़ता है। यहाँ भी बहुत से पुजारी होते हैं। बस, आप भोलाराम की दरख्वास्तों पर कुछ वजन रख दीजिए।

नारद–लेकिन ... ...

बड़े साहब–लेकिन वेकिन कुछ नहीं। वजन रखिए। आप शायद अब भी नहीं समझे। जैसे, आपकी यह सुन्दर वीणा है न, आप चाहें तो इसका भी वजन भोलाराम की दरख्वास्तों पर रख सकते हैं। अहा, क्या कहा था कबीर ने –'ऐसी वीणा बोलिए मन का आपा खोय।'

सचमुच साधु-संतों की वीणा से तो मधुर स्वर निकलते ही हैं। इससे मेरी लड़की जल्द ही संगीत सीख जायगी और फिर जल्द ही उसका विवाह भी हो जायगा। बड़े बाबू, जरा भोलाराम की पेंशन की फाइल तो देना। (बड़े बाबू फाइल टेबुल पर रख जाते हैं।)

नारद–(फाइल पर वीणा रखते हुए)—यह लीजिए, वजन रख दिया। अब जल्दी से ऑर्डर निकाल दीजिए।

बड़े साहब–हाँ, तो साधुजी, क्या नाम बतलाया मास्टर का?

नारद–भोलाराम।

बड़े साहब–क्या कहा?

नारद–(जोर से) भोलाराम।

(सहसा फाइल में से स्वर निकलता है—'कौन पुकार रहा है मुझे? पोस्टमैन है क्या? क्या पेंशन का ऑर्डर लेकर आया है?' साहब डर जाते हैं और नारद भी चौंकते हैं, परन्तु नारद शीघ्र समझ जाते हैं कि यह स्वर भोलाराम की आत्मा का है।

नारद–भोलाराम क्या तुम भोलाराम की आत्मा हो?

स्वर हाँ।

नारद–चलो स्वर्ग, मैं तुम्हें लेने आया हूँ। वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा हो रही है।

स्वर–नहीं, मैं कैसे जाऊँ? मेरा परिवार मेरी पेंशन की प्रतीक्षा कर रहा है और मैं यहाँ पेंशन की फाइल में अटका हुआ हूँ। अपने दरख्वास्तों को छोड़कर कैसे जाऊँ?

(नारद एवं बड़े साहब फाइल की ओर देखते रहते हैं। धीरे-धीरे यवनिका-पतन।)

●

कविताएँ

बेबसी

निशात फिरदौस
तृतीय वर्ष कला

अपनी ही झोली खाली है, दान कैसे दूँ
खुद ही हूँ अभिशाप्त, तो वरदान कैसे दूँ
नफरत पायी दुनिया से, फिर प्यार कैसे दूँ
घृणा मिली, तो प्रीत का व्यवहार कैसे दूँ
खुद ही तो हूँ प्यासी, फिर मैं तृप्ति दूँ कैसे
खुद ही तो मैं जी रही हूँ जीवन बिन जैसे
खुद ही तो हूँ बेसहारा थाम लूँ कैसे
प्रश्न हूँ खुद ही, उत्तर का नाम लूँ कैसे

कल्पना एक विवाहित कवि और एक अविवाहित आशिक की

नीलम कुमारी
तृतीय वर्ष कला

एक रात
कवियों की गली में
कुत्ता भौंका,
कवि पत्नी का मन
अचानक चौंका !
पूछा उसने कवि से—
'इतनी रात गए
कुत्ता क्यों भौंका ?'
सो रहे कवि ने
कुनमुनाकर कहा—
'कोई आशिक
अपनी माशूक से मिलने का
देख रहा होगा मौका !'

पुष्पा शर्मा
तृतीय वर्ष कला

राशन की कतार में
था वह खड़ा
बाँधे मनसूबा,
न जाने कब
मिलेगी महबूबा !
राशन की लम्बी
कतार थी खड़ी,
उसकी कल्पना की डोर
उससे भी बड़ी !
जब तक दुकान खुली
प्यारे की,
जेब कट चुकी थी
दुलारे की !

दुनिया

शीला कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

बनाने वाले, तूने क्या यही दुनिया बनाई है
हजारों खूबियाँ होते हुए भी तो बुराई है
ये दुनिया ऐसी दुनिया है, समझ में किसको आई है
परखना भी ये मुश्किल है कि किसमें क्या भलाई है
चमकते चाँद को भी दाग, फिर तूने ये क्या बाँटे
बनाके खुशनुमा फूलों में तूने भर दिये काँटे
अगर ऐसा न होता, हर कोई मगरूर हो जाता
जमीं से आसमाँ टकराके चकनाचूर हो जाता

•

आओ, संकल्प लें

रीता कुमारी
प्रथम वर्ष कला

आओ, संकल्प लें—
अब नहीं होगा
स्त्रियों का परित्याग,
हमारे हृदय में होगा
त्याग और प्रेम,
हमारे दिल से निकलेंगे
सत्य और अहिंसा के उपदेश
और होगी हममें
उपकार की मनोकामना।

आओ, संकल्प लें—
अब अज्ञान का दानव
किसी निरीह को
पंजों में जकड़ नहीं पाएगा,
और हम सब मिलकर
ज्ञान के दीप जलाए
समता का नारा लगाते हुए
देश के विकास हेतु
कदम से कदम मिलायेंगे।

•

समस्या

दहेज दहेज दहेज दहेज दहेज

दहेज यह शब्द घिस-पिट गया है, काफी पुराना पड़ गया है। इसका कारण यह है कि हम इस शब्द को शब्द के रूप में अधिक देखते आ रहे हैं, समस्या के रूप में बहुत कम। सच्चाई तो यह है कि यह समस्या जितनी पुरानी पड़ती जा रही है, उतनी गहरी बनती जा रही है।

यहाँ प्रस्तुत हैं हमारी दो छात्राओं की प्रतिक्रियात्मक अभिव्यक्तियाँ, जिन्हें हम ज्यों का त्यों रख रहे हैं।

१ : पुष्पा शर्मा

तृतीय वर्ष कला

विधि की विडम्बना है कि एक वृक्ष पर लगे दो पुष्पों में से एक को जो अधिक सुरभित और सुरम्य होता है, अभिशाप समझ लिया जाता है और दूसरे को कष्टमय होते हुए भी वरदान। एक के जन्म से घर पर मौत की छाया और माता-पिता के मुख पर मलिनता एवं मन में उदासीनता की काली घटा मँडराने लगती है तथा दूसरे के जन्म से घर में ढोल बजाये जाते हैं। विभेद और विषमता भरे ये दोनों तत्व हैं—कन्या और पुत्र।

माँ की कोख में पुत्र जन्म लेता है, उसी कोख से पुत्री का भी जन्म होता है, पर माँ स्वयं भी पुत्री के जन्म से दुःखी हो उठती है। उसे हर समय "पराया धन" कहना प्रारम्भ कर देती है। उसके लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा आदि अन्य क्षेत्रों में भी भेद-दृष्टि रखी जाती है।

वर्तमान युग में समाज के आर्थिक वर्ग-विभाजन ने कितनी ही कन्याओं को मातृत्व के सौभाग्य से वंचित कर दिया है। हजारों कन्याओं की माँग में सिन्दूर इसलिए न भरा जा सका कि माता-पिता उनके वालों के दहेज की माँग को पूरा करने में समर्थ नहीं थे। दहेज-प्रथा राष्ट्र के विकास-मार्ग का बड़ा घातक शत्रु है। पिता जब यह देखता है कि वह दहेज नहीं दे सकता, तब वह विवश होकर भ्रष्टाचार, बेईमानी, रिश्वतखोरी, चोरी, तस्करी करता है और काला धन इकट्ठा करने में जुट जाता है।

दहेज भारतीय संस्कृति के पवित्र भाल पर एक कलंक है। रावण ने केवल एक सीता का हरण कर उसके जीवन को कष्टमय बनाया था, परन्तु आज के दहेज-लोलुप रावणों ने न जाने कितनी कन्याओं को सौभाग्य सिन्दूर से वंचित करके उनका जीवन दूभर बना दिया है।

शिशुपाल ने केवल हजार रानियों को कैद कर लिया था, परन्तु दहेज लोभी शिशुपालों ने न जाने कितनी भारतीय कन्याओं का अपने क्रूर करों से गला घोंट दिया है। दहेज मानव जाति के लिए अभिशाप है। अगर किसी प्रकार से लड़की को अच्छा घर तथा वर मिल भी जाता है परन्तु दहेज इच्छानुकूल नहीं पहुँच पाया, तो सास और ननद कलह कर तथा जला कर भी लड़की की जान ले लेती हैं। न जाने, कितनी कन्याएँ आत्महत्या कर लेती हैं और कन्या के माता-पिता भी दुःखी होकर आत्महत्या कर लेते हैं। ये देश की व्यक्तिगत हानियाँ हैं जो अथाह हैं।

ऐसे रीति-रिवाज, ऐसी कुप्रथाएँ जो स्त्री के लिए कष्टप्रद हैं, उन्हें नष्ट करने का प्रयास करना चाहिए। दहेज प्रथा को सिर्फ कानून द्वारा ही समाप्त नहीं किया जा सकता है, इसके लिए सामाजिक चेतना व जागृति आवश्यक है। यह कार्य भविष्य में बनने वाली सास अच्छी तरह कर सकती है।

●

२ : सुनीता कुमारी

तृतीय वर्ष कला

मैं एक लड़की होने के नाते दहेज लेनेवाले को एक लोभी लोमड़ी के रूप में देखती आई हूँ। अगर हमारा समाज लड़कियों का कुछ महत्व देता तो इस दहेजरूपी राक्षसी का जन्म नहीं होता। बेटीवाले भी गलती करते हैं कि बेटेवाले को दहेज देते हैं। बेटेवाले तो यही समझते हैं कि हम जो चाहें, मिल जाएँ। उन्हें सब कुछ मिल भी जाता है क्योंकि बेटीवाले मजबूर रहते हैं। उन्हें डर रहता है कि अगर हम बेटेवाले की माँग पूरी नहीं करेंगे तो विवाह के बाद भी प्यारी बेटी की जली लाश देखेंगे। अगर लड़केवाले सोचें कि जिस तरह हम अपने लड़के को पालते हैं, पढ़ाते हैं, उसी तरह लड़कीवाले ने भी अपनी बेटी को पाला-पोसा और पढ़ाया-लिखाया है, तो शायद बहुत कुछ सुधार हो सकता है। लेकिन होता यह है कि दहेज के कारण लोग अपने बेटे को पढ़ा-लिखाकर बैल की तरह बेच लेते हैं। वे सीना तानकर चलते हैं, जबकि उन्हें शर्म होनी चाहिए। अगर हम लड़कियों को कुछ करने का हक रहता तो हम दहेज-लोभियों के चेहरे पर कालिमा-चूना पोत देती, परन्तु हम तो मजबूर हैं।

●

लघु कथाएँ

मुझे पीड़ा हुई

पूनम रानी
प्रथम वर्ष कला

मैं एक किताब की दुकान पर किताबें खरीदने के लिए रुकी थी। एक महिला वहाँ से गुजरी। साथ में सात-आठ वर्ष का एक बच्चा भी था। बच्चा मचल गया—'मम्मी, किताब खरीद दो न।' 'चुप! किताब क्या करेगा? चल, चॉकलेट ले दूँ।' महिला ने बच्चे को समझाया।

'नहीं, मम्मी, मुझे तीन रुपये की चॉकलेट नहीं लेनी। एक रुपया वाली यात्रा पॉकेट बुक ले दो न।'—बच्चे ने ज़िद पकड़ ली।

महिला ने बच्चे की माँग पूरी नहीं की। मैं देख रही थी, सुन रही थी और सोच रही थी कि बच्चे का मानसिक विकास किताब और बाहरी दुनिया से होता है या चॉकलेट से! मुझे पीड़ा हुई।

....और मुझे तरस आया

मीनू विश्वास
तृतीय वर्ष कला

मैं रिक्शा पर सवार थी। मुझे कॉलेज पहुँचने की जल्दीबाजी नहीं थी, परन्तु रिक्शा-वाले को जल्दीबाजी थी। वह तेजी से पैडल चलाता हुआ बढ़ा जा रहा था। मेरे मना करने पर वह बोला—'बहनजी, मैं इतनी ही तेजी से चलाता हूँ रिक्शा।'

मैं चुपचाप बैठी रही। वह अन्य रिक्शे-वालों को पीछे छोड़ता हुआ सगर्व रिक्शा बढ़ाये जा रहा था।

'देख रही हैं, बहनजी! कोई रिक्शावाला नहीं सकेगा मुझसे।'—उसने सीना तानकर कहा।

तभी पैडल की चेन उतर गयी। धीरे चलानेवाले रिक्शाचालक उससे आगे बढ़ रहे थे। वह कभी चेन को देखता था, कभी दूसरे रिक्शाचालकों को; और मैं उसे देख रही थी। मुझे तरस आया।

कौन किसको चौपट करता है?

कुमारी रंजना
प्रथम वर्ष कला

जुआ : दौलत को
आलस्य : काम को
लोभ : ईमान को
शेखी : पहलवान को
झूठ : सम्मान को
गुस्सा : अक्ल को
अहंकार : ज्ञान को

उसने कहा—

'मुझे लाल नहीं, हरी रोशनी दीख पड़ी थी।'

कविता कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

बहुत दिन पहले की बात है। एक व्यक्ति रात में अपनी कार से जा रहा था। एक चौराहे पर ट्रैफिक पुलिस ने उसे लाल रोशनी दिखाकर रुकने का संकेत किया, लेकिन वह व्यक्ति अपनी कार को आगे बढ़ाता निकल गया। दूसरे दिन पुलिस ने कोर्ट में उसके खिलाफ मुकदमा दायर किया। उसे कोर्ट में बुलाया गया और उससे इस सम्बन्ध में पूछा गया, तो उसने एक दिन की मुहलत माँगी जो उसे दे दी गई। रातभर उसने अपने व्याख्यान तैयार कर कोर्ट में जमा किया और बोला—'मुझे लाल की जगह हरी रोशनी दीख पड़ी थी, इसलिए मैं कार बढ़ाता रहा, अपनी राह पर अग्रसर होता रहा।'

जज महोदय ने उसके व्याख्यान पढ़े, परन्तु उनकी समझ में कुछ नहीं आया। जज महोदय ने अनेक वैज्ञानिकों को बुलाकर उन्हें उस व्यक्ति के व्याख्यान दिखलाये। सभी वैज्ञानिक पढ़कर आश्चर्य में पड़ गये। जब एक वैज्ञानिक ने जिज्ञासा की कि गाड़ी का वेग क्या था, तब उस व्यक्ति ने बताया कि रात में उसे कुछ पता नहीं चल सका। जज महोदय ने दण्ड रूप में उसे कुछ देर तक कटघरा में खड़ा रहने को कहा। बाद में वह वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

जानती हैं आप, वह वैज्ञानिक कौन था?

वह थे भौतिकी के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्सटीन।

●

स्वप्न के रंग विज्ञान के संग

रम्भा कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

रात मैंने एक सपना देखा—बड़ा ही अजीब सपना। देखा कि भारत और चीन के बीच युद्ध हो रहा है (भगवान न करें, ऐसा हो)। चीन के सैनिकों ने टिन के वस्त्र पहन रखे हैं और भारत के सैनिकों ने लोहे के वस्त्र। हँसिए मत, बात सपने की है न! देखा कि जब दोनों सैनिक हिमालय के पास पहुँचे तो टिन के वस्त्र काले हो गये और लोहे के वस्त्र उजले। सैनिक हैरान और मैं भी हैरान। आखिर ऐसा हुआ क्यों?

बात पहुँची एक वैज्ञानिक के पास और उसने अनुसंधान शुरू किया। पाया गया कि टिन (Sn) पानी से प्रतिक्रिया कर H_2 गैस और स्टैनस-ऑक्साइड $Sn + 2H_2O \rightarrow SnO_2 + 2H_2 \uparrow$ बना देती है जो काला है और लोहा पानी से प्रतिक्रिया कर उजला बन जाता है।

सच, कभी-कभी सपना भी हमारा ज्ञान बढ़ा जाता है।

●

चिता जल रही है

ममता कुमारी
तृतीय वर्ष कला

अंधेरी निशा में नदी के किनारे
धधक कर किसी की चिता जल रही है

धरा रो रही है, बिलखती दिशाएँ,
करुण वेदना से गगन रो रहा है
अंधेरी निशा में नदी के किनारे
धधक कर किसी की चिता जल रही है

चिता पर किसी की अधूरी कहानी,
चिता पर किसी का मधुर प्यार जलता
अंधेरी निशा में नदी के किनारे
धधक कर किसी की चिता जल रही है

था आया अकेला जगत के सफर में,
अकेला जगत से चला जा रहा है
अंधेरी निशा में नदी के किनारे
धधक कर किसी की चिता जल रही है

सुहागिन की दुनिया लुटी जा रही है
अभागिन की दुनिया जली जा रही है
अंधेरी निशा में नदी के किनारे
धधक कर किसी की चिता जल रही है

●

कुछ नहीं कहेंगे

इन्दिरा कुमारी
तृतीय वर्ष कला

हम कुछ नहीं कहेंगे
व्यथा के पथ में
कथानक की यात्राएँ
अनुभूतियों के शतदल
अभिव्यक्ति की व्यथाएँ
हम कुछ नहीं कहेंगे
साँझ ढले
पहाड़ी मन्दिर में
आरती-स्वर की प्रार्थनाएँ
पाषाण सम्मुख
कातर विवशताएँ
हम कुछ नहीं कहेंगे
बचपन में
नीड़ आ बसे अंधेरे सपने
हृदय स्वर्णरेखा सीप
दूबे बोल सिसकियों में
आस्था के नगर
शून्य भरी शाम
सिमट बैठ गयी खिड़कियों में
हम कुछ नहीं कहेंगे
मल्हार गाता मौसम
फागुन भोगता आँगन
हवा, ओ हवा
मत द्वार थपथपा
टूटे पलछिन
हम कुछ नहीं कहेंगे

●

कुण्डलिया

अनुपम कुमारी
प्रथम वर्ष कला

इंस्पेक्टर इसकूल में करने आये जाँच—
'दो धन दो कितने हुए ?' लड़का बोला—'पाँच।'
लड़का बोला पाँच, मास्टर आगे आये,
पीठ ठोक करके लड़के को फिर बैठाये।
'लड़के को देता शाबाशी गलत गणित पर,
सत्यानाशी टीचर तू'—चीखा इंस्पेक्टर !
टीचर मिमियाने लगे—'क्यों होते नाराज,
बतलाता हूँ आपको इस लड़के का राज।
इस लड़के का राज आप कल नहिं आए थे,
इसी छात्र ने दो धन दो 'छह' बतलाए थे।
आज 'पाँच', कल आ जाएगा स्वयं 'चार' पर,
मैं भी तो हूँ इसी छात्र का आखिर टीचर !'

●

चौपाई

गीता कुमारी
प्रथम वर्ष कला

जय जय बुधिबर्धिदि भगवाना।
तुम पावरफुल कृपानिधाना॥
एक नेत्र, प्रभु, खोलहु मो पर।
मेंटल चिन्ता लेहु, प्रभो, हर॥

सेटप बिनु लेक्चरहि करावहु।
कबहु नाहीं कानं भरावहु॥
करहु ऐसो, प्रभु, करहु डिसीजन।
बिना परीक्षा फर्स्ट डिवीजन॥

●

राष्ट्रीय एकता में छात्रों की भूमिका

सोनी कुमारी
चतुर्थ वर्ष कला

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि युवा-छात्र हमारे राष्ट्ररूपी शरीर के बैकबोन हैं। हमारे देश में विभिन्न जाति, धर्म, भाषा एवं वेश-भूषा के लोग हैं, परन्तु अनेकता में एकता हमारी सबसे बड़ी विशेषता है। हमारे छात्रों को पुनः संकल्प लेना है कि गाँधी, राजेन्द्र और नेहरू के राष्ट्र में यदि एकता एवं अखंडता को खंडित करने की साजिशें हुईं तो हम उनके मार्ग में चट्टान बनकर खड़े रहेंगे।

एकता किसी भी राष्ट्र का मूलभूत सिद्धान्त है। इसी सिद्धान्त पर भारत की एकता भी वांछनीय है। यों, भारत एक विशाल देश है जहाँ भाषा, धर्म, जाति, वेश-भूषा आदि सभी क्षेत्रों में विविधताएँ हैं, लेकिन इन विविधताओं के बावजूद हमारी राष्ट्रीय एकता विश्व के सामने एक बेमिसाल उदाहरण के रूप में चली आ रही है।

इतिहास के स्वर्णिम अध्यायों से पता चलता है कि इस एकता में छात्रों का प्रशंसनीय योगदान रहा है। वस्तुतः छात्र ही तो देश के भविष्य का निर्माण करते हैं। गाँधीजी ने भी कहा था—Students are the key of the nation. स्वामी विवेकानन्द ने छात्रावस्था में ही स्वामी रामकृष्ण परमहंस का शिष्यत्व ग्रहण किया था और अपनी एक ही पंक्ति—"Ladies and gentlemen of America" से अमेरिका तो क्या, विश्व को चकाचौंध कर दिया था।

छात्र छात्राओं के अकथनीय योगदान से हमारी धरती भी तो गौरवान्वित रही है। इतिहास का वह सुदूर अतीत जब विश्व-क्रांतियों के दौर से गुजर रहा था, सभी छोटे-बड़े देश उपनिवेशवाद के खिलाफ संघर्ष कर रहे थे, भारत जैसे विशाल उपमहाद्वीप में भी यह लहर चली। सदियों से जकड़ी भारतमाता की बेड़ी खनखना उठी। क्रान्तिकारियों ने हुंकार किया। स्वदेशी आन्दोलन हुए। सत्य-अहिंसा का स्वर लहराया। माता का करुण स्वर सुनाई पड़ा। फिर तो राष्ट्रीय बलिवेदी पर जी खोलकर बलिदान होने के लिए बलिदानियों का हुजूम चल पड़ा। स्कूलों और कॉलेजों का बहिष्कार हुआ। सारे-के-सारे भेद-भाव मिट गये। लाखों की संख्या में छात्र-छात्राओं की टोलियाँ आजादी का बाना पहने इस गुरुतर भार को वहन करने चल पड़ीं। बरसने लगी लाठियाँ, फूटने लगे बम। छूटने लगी तोपें और बरसने लगीं गोलियाँ। भारत की धरती रक्तरंजित

हो उठी। भगत, चन्द्रशेखर, मंगल, बटुकेश्वर आदि हजारों की दुनिया उजड़ गयी। पटने का शहीद स्मारक उन्हीं असंख्य छात्र-छात्राओं के त्याग और बलिदान का ही ज्वलन्त प्रतीक है।

लेकिन आज छात्रों के कर्तव्य पर, उनकी आत्म-भावना पर, राष्ट्रीय विकास के सारे संसाधनों पर एक प्रश्नचिह्न-सा लग गया है इसलिए कि हमारी चेतना विलुप्त हो गयी है, हमारा मार्ग बदल गया है। हम कर्तव्यच्युत हो गये हैं। मुट्ठी भर स्वार्थियों और प्रपंचियों का नेतृत्व पाकर हम जाति, रंग, धर्म, भाषा आदि भेदों को अंगीकार कर अपने को गौरवान्वित समझने लगे हैं। कहाँ तो हमने शपथ खायी थी गाँधी, नेहरू और राजेन्द्र जैसे बनने की, और कहाँ हम विशृङ्खलित होकर सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर मानवता को चुनौती देने का दम भरने लगे हैं!

हम मनीषियों और महर्षियों की उस अमर वाणी कि "एकता ही किसी भी राष्ट्र को समृद्ध और समुन्नत बनाती है," को अंगीकार करें। देश खंडन के उस कगार पर जा पहुँचा है जहाँ से लौटना दुष्कर-सा प्रतीत होता है। नष्ट हो रही है शिक्षण संस्थाओं की वह संचित मर्यादा, जिसे वर्षों पूर्व हमने संजोयी थी। बिखर रही है सुदूर अतीत की वह गौरवशाली परम्परा, जिसे असंख्य छात्रों ने अपना खून बहाकर कायम की थी। धूमिल हो रही है हमारी वह निरछल, निस्पंद छवि, जिसे सदियों पहले विश्वरिकार्ड में पिरोयी गयी थी। टूट गया गाँधी का सपना, बिखर गया नेहरू का विश्वास और चूर-चूर हो गयी राजेन्द्र की गरिमा।

काश, हम सारे-के-सारे भेद-भावों को मिटा पाते! हमें विकास की संकुचित परिधि से निकल कर विस्तृत भूमिका निभानी होगी, क्षेत्रीयता का उन्मूलन कर विकास का विशाल पैमाना बनाना होगा। आजादी के चन्द वर्षों बाद ही हम घुटन, जलन, उत्पीड़न का अनुभव कर 'त्राहि माम' की रट लगा रहे हैं। पहचानना होगा अपने अन्दर के राक्षस को, तोड़ना होगा रंगभेद की संकुचित परिधि को, दूर करना होगा जातीयता की निर्लज्ज परम्परा को और मिटाना होगा धार्मिकता की संकीर्ण भावना को।

अतः राष्ट्रीयता को समुन्नत और सुदृढ़ बनाने के लिए छात्र-छात्राओं का एकल सहयोग अपेक्षित है। छात्र ही तो देश के उज्ज्वल भविष्य के निर्माता होते हैं। समस्त भेद-भावों को मिटाकर इस महासंक्रान्ति काल में दबती राष्ट्रीयता को उभारकर पारस्परिक एकता और अखंडता की मर्यादा कायम करनी होगी। ईर्ष्या, द्वेष, घृणा आदि के उठनेवाले बवंडर को दबाकर राष्ट्रीयता को ऊर्ध्वमुखी बनाना होगा। तब ही हम अपने को सच्चा नागरिक बना सकेंगे।

जब हम गुलामी की जंजीर में बँधे थे, चन्द्रगुप्त, शिवाजी और महाराणा प्रताप के देश में विदेशियों के आगमन ने छात्रों के शौर्य को ललकारा, उनके संस्कार को झकझोरा। चेतना जाग्रत हो गयी शौर्य जाग उठा, बाहें

फड़कने लगीं, कर्तव्य-बोध होने लगा और फिर देखते ही देखते भारतमाता की बलिवेदी पर कुर्बान होने के लिए सीना ताने छात्र-छात्राओं का हुजूम चल पड़ा। अंग्रेजी हुकूमत का वह चमकता हुआ सूरज मलीन होने लगा, जब छात्रों ने चुनौती दी। स्वराज्य का स्वर गूँजा, छात्र-छात्राओं ने एक स्वर से हामी भरी। क्रांति का स्वर गूँजा, बहन ने भाई को राखी बाँधी। दोनों मस्ती में झूम उठे।

लेकिन क्या हम वही हैं ? ——नहीं, नहीं, हम वह नहीं रहे। एक आजादी हमने हासिल की, दूसरी आजादी खो दी। हमने जाति, धर्म, वर्ग, भाषा, सम्प्रदाय आदि कुत्सित और घृणित संस्कारों को ग्रहण कर लिया है और लुप्त हो गया है हमारा ज्ञान, संकुचित हो गयी है परिधि, खंडित हो गयी है हमारी शान्ति, विच्छिन्न हो गयी है हमारी चेतना, कुंठित हो गयी है बुद्धि, विनष्ट हो गयी है हमारी सांस्कृतिक चेतना।

छात्र-छात्राओं पर ही राष्ट्र का भविष्य निर्भर है। गुण, चरित्र, कार्य-कुशलता एवं कार्य-क्षमता ही राष्ट्रीय एकता का पोषक होती है—हमें यह नहीं भूलना है।

अतीत का गीत दुहराने से कुछ नहीं होता। हम वर्तमान को देखें और भविष्य की चिन्ता करें।

—बेनीपुरी

मात्रक अध्याय

अमीता कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

कुछ उपयोगी मात्रक की कविता मैंने कर दी तैयार
न्यूटन बल के लिए बाबू है और दाब का मात्रक बार
अर्ग कार्य की यूनिट है, आवेश कहाता है कूलाम
कैंडिल-पावर ज्योति तीव्रता का मात्रक दे सबों को काम
डायोप्टर है लेंस शक्ति जिससे चलता चश्मा का काम
यूनिट विद्युत ऊर्जा-मात्रक, किलोवाट का घंटा नाम
आवृत्ति हेतु हर्ट्ज, प्रकाश विकिरण को मानो लक्स सहर्ष
आकाशी पिण्डों की दूरी-मापन-मात्रक प्रकाश वर्ष
मात्रक शक्ति हॉर्स पावर का जो मशीन की होती जान
प्वाइज श्यानता गुणांक मात्रक विद्युत चालकता-सामान
प्रेरकत्व मात्रक हेनरी, प्रदीपन तीव्रता फुटकैंडल
फर्मी नाभिक-त्रिज्या-मापक, दाबक मात्रक है पास्कल
बेल नहीं केवल पत्र, कागज की पचीस यह होती; रीम
सी० जी० एस० डाइनबल-मात्रक, यूनिट की तादाद असीम
ऊपर के सब व्युत्पन्न मात्रक, मूल चलाता है सब काम
समय मिनट, लम्बाई मीटर, मात्रा-मात्रक किलोग्राम

•

नारी

सरिता कुमारी

प्रथम वर्ष कला, क्रमांक—२४

— औरत प्रकृति का प्रतिनिधित्व करती है।

— औरत का नारी होना उसकी एक विशिष्ट उपलब्धि है और यह सोना में सुगन्ध के समान है।

— नारीत्व-विहीन औरतें गंधहीन पलाश पुष्प के समान होती हैं।

— नारीत्व से युक्त औरतें सत्य, शिव और सुन्दर होती हैं।

— नारी को समझना जितना ही आसान मालूम पड़ता है, नारी बनना उतना ही कठिन है।

— औरत का नारी-रूप ही सर्वशक्तिमान होता है।

— नारी एक ऐसा आँचल है, जिसकी छाँव में पाथेयहीन पथिक अपना आश्रय लेते हैं।

— नारी के लिए हर वस्तु "वसुधैव कुटुम्बकम" होती है।

— कैकेयी औरत थी और कौशल्या नारी।

— सार्वभौम धर्म-पालन ही औरत को नारी बना देता है।

•

नारी का आकर्षण पुरुष को पुरुष बना देता है, तो उसका अपकर्षण उसे गौतम बुद्ध बना देता है।

: मोहन राकेश

मर्दों को भी हिस्टीरिया

दीपक कुमार

प्रयोगशाला तकनीशियन, मनोविज्ञान विभाग

शीर्षक देखकर चौंकिए मत। यह बात अलग है कि हिस्टीरिया रोग से औरतें अधिक प्रभावित हैं, परन्तु यह रोग मर्दों को भी लगता है; इसका सबूत कोई असमर्थ पुरुष नहीं, एक वैसा पुरुष है जो मर्दानगी के प्रतीक के रूप में देखा जाता है —जी हाँ, हमेशा मोर्चा लेनेवाला सिपाही।

हिस्टीरिया एक मनःस्नायु विकृति है। प्राचीन काल में इसे एक मानसिक रोग के रूप में स्वीकार किया जाता था। 'हिस्टीरिया' एक ग्रीक शब्द है जिसका अर्थ 'गर्भाशय' होता है और इसी अर्थ में प्राचीन धारणा यह थी कि शरीर में गर्भाशय के इधर-उधर घूमने से यह रोग होता है और यही कारण है कि इस रोग का मुख्य सम्बन्ध स्त्रियों से है, क्योंकि गर्भाशय औरतों में ही पाया जाता है। इस सम्बन्ध में प्राचीन धारणा यह भी है कि यह रोग भूत-प्रेत के अभिशाप का प्रतिफल है तथा जब कोई मृत आत्मा किसी स्त्री के शरीर में प्रवेश कर जाती है तब हिस्टीरिया के विभिन्न लक्षण प्रगट होने लगते हैं।

आज की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि में यह रोग मानसिक विकृति के रूप में स्वीकार किया जाता है तथा इसके लक्षणों में निद्राभ्रमण, स्मृति-लोप एवं मूर्च्छा आदि को महत्वपूर्ण माना जाता है। मनोवैज्ञानिक मार्टिन प्रिंस के अनुसार हिस्टीरिया न केवल औरतों में पायी जाने वाली विकृति है, बल्कि यह मर्दों में भी पायी जाती है, क्योंकि प्रथम विश्व युद्ध के समय यह रोग एक सिपाही में देखा गया था। मनोवैज्ञानिक फ्रॉयड के अनुसार यह रोग स्त्रियों में अधिक इसलिए होता है कि उनमें लैंगिक विकास की क्रिया जटिल होती है और जब वे इससे अधिक प्रभावित होती हैं तो वे हिस्टीरिया-ग्रसित हो जाती हैं। जहाँ तक हिस्टीरिया के कारण का प्रश्न है, मनोवैज्ञानिक फ्रॉयड ने असन्तुष्ट लैंगिक इच्छाओं को ही महत्वपूर्ण बतलाया है। उनके अनुसार जब भी पुरुष या स्त्री की लैंगिक इच्छाओं का अत्यधिक दमन होता है, तो वह इस रोग से पीड़ित हो जाता है / या हो जाती है।

अब प्रश्न उठता है कि इस रोग का उपचार क्या है? इसका पूर्ण रूपेण उपचार मनोविश्लेषण की सहायता से ही सम्भव है। वैसे स्वतंत्र साहचर्य विधि भी उपयुक्त है।

यह स्पष्ट है कि हिस्टीरिया न केवल औरतों का रोग है, बल्कि यह रोग मर्दों में भी पाया जाता है। इसे मात्र औरतों का रोग नहीं समझना चाहिए।

सफलता मिलती है कैसे ?

रेखा कुमारी

तृतीय वर्ष कला, क्रमांक २४

मनुष्य अपने भाव और विचार के अनुरूप कार्य करता है। इसके कार्य सभी के अनुकूल ही हों, यह बात नहीं; प्रतिकूल भी हो सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य को संघर्ष करना पड़ता है कदम-कदम पर कठिनाइयों एवं विपत्तियों का सामना करना पड़ता है और ऐसी स्थिति में धैर्य एवं साहस की आवश्यकता होती है। साहस कठिनाइयों का सामना करने के लिए है एवं धैर्य काम को स्थगित करने से रोकता है तथा आगे बढ़ने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करता है। प्रोत्साहित व्यक्ति जब संघर्ष कर आगे बढ़ता है और कदम-कदम पर विफल होने लगता है, तो कार्य को बन्द कर देने की बात सोचने लगता है। यदि कार्य बन्द कर देता है, तो वह कठिनाइयों से तो मुक्त हो जाता है, किन्तु लाभ से वंचित रह जाता है। समझदार व्यक्ति सुफल की उपलब्धि तक प्रयत्नशील रहता है। संघर्ष के क्रम में आनेवाली असफलताओं के कड़ुवापन की परवाह वह नहीं करता। वह जानता है कि सफलता का मधुर फल तब तक नहीं मिलता, जब तक बार बार असफलता के बाद भी सफलता के लिए संघर्ष का क्रम जारी रखा जाए। व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि असफलता ही सफलता का मार्ग प्रशस्त करती है। अतः कितनी भी कठिनाइयाँ आयें, मनुष्य को

(अगले पृष्ठ के पहले कॉलम में जारी)

अभिवादन करते हैं ऐसे

कविता बैरोलिया

प्रथम वर्ष कला

1. भारतवर्ष :—दोनों हथेलियों परस्पर जोड़कर माथे से सटाते हैं, फिर कुशल-क्षेम पूछते हैं।

2. फिलीपीन :—झुककर दोनों हाथ गालों पर रखकर एक पैर पर खड़े हो जाते हैं।

3 थाईलैंड :—मिलते समय नाक से नाक रगड़ते हैं।

4. अंडमान : भुजाओं से परस्पर आलिंगन कर जोर से रोते हैं।

5. जाजीबा :—जूपी जाति के लोग मित्र के आने पर कुर्सी देकर चुप बैठ जाते हैं, फिर कुछ समय बाद चिल्लाकर पूछते हैं—'तुम आये हो ?'

6. मोरक्को :—अगवानी में घोड़े को तीव्रता से ले जाकर अपनी मित्रता का परिचय देते हैं।

7. इंग्लैण्ड :—अपना टोप उतारकर थोड़ा झुकते हैं, फिर कहते हैं—हाउ डू यू डू ?"

(अगले पृष्ठ के दूसरे कॉलम में जारी)

घबराना नहीं चाहिये तब तक, जब तक कि उसे सफलता का मधुर फल न मिल जाए। गुलाब के सुन्दर, सुकोमल और सुगन्धित फूलों के अभिलाषियों को काँटों से उलझने को प्रस्तुत रहना ही पड़ता है, उसी प्रकार जब हम धैर्य धारण कर अपने कार्यों को पूरा करने को बढ़ें, तो अनेक कठिनाइयों को झेलते हुए धैर्य के बल पर अन्त में हमें अवश्य अपने कार्यों में सफलता का मधुर फल प्राप्त होगा।

8. पालिनेशिया :—मिलने पर अपने कपड़े कमर तक उतार देते हैं।

9. चीन :—चीनी प्रायः नंगे सिर रहते हैं, किन्तु मित्र के स्वागत में टोपी पहन लेते हैं।

10. तिब्बत :—मुँह खुला कर जीभ थोड़ी बाहर निकाल देते हैं।

जब नाश मनुज पर छाता है,
पहले विवेक मर जाता है।
—दिनकर

आर्थिक चिन्तन का दस्तावेज : कौटिल्य का अर्थशास्त्र

प्रो० हेम कुमार झा
अर्थशास्त्र विभाग

यह लगभग सिद्ध हो चुका है कि मैसूर में मुद्रित अर्थशास्त्र चाणक्य का है और यह मौर्य्य सम्राट चन्द्रगुप्त के लिए बनाया गया था। यह ग्रन्थ भारत के आर्थिक चिन्तन के दस्तावेज के रूप में है।

भारतीय संस्कृति में धर्म वाङ्‌मय की भाँति अर्थ वाङ्‌मय का भी स्वतंत्र और विस्तृत क्षेत्र है। एन० घोषाल ने अपनी पुस्तक में लिखा है—"भारत का भूतकाल अत्यन्त उज्ज्वल रहा है और ईसा से चौथी शताब्दी पूर्व भी आर्थिक विचार उतने ही व्यापक थे जितने आज पाश्चात्य देशों के विचार हैं।" यद्यपि प्राचीन भारत के आर्थिक विचारों की झलक वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों, धर्मशास्त्रों, नारद, शुक्र तथा विदुर के नीतिशास्त्रों, विभिन्न स्मृतियों (जैसे—मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य-स्मृति, नारद-स्मृति, पराशर स्मृति, गौतम - स्मृति) आदि ग्रन्थों में मिलती है, किन्तु इस सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण कृति है चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में रचित आचार्य कौटिल्य का "अर्थशास्त्र", जिसे हम भारत के आर्थिक चिन्तन के इतिहास का अमूल्य दस्तावेज मान सकते हैं।

आचार्य कौटिल्य अथवा चाणक्य भारतीय इतिहास के एक चर्चित व्यक्तित्व हैं। इनका मूल नाम विष्णुगुप्त था, बाद में कुटिल राजनीतिज्ञ होने के कारण इनका नाम कौटिल्य पड़ा। इन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से 321 ई० पू० में नन्द वंश को समाप्त करके अपने शिष्य चन्द्रगुप्त को मगध के विशाल साम्राज्य के सम्राट पद पर पदस्थापित कर भारतीय इतिहास को नई दिशा दी। इतिहासकारों का मत है कि जिस प्रकार इटली के प्रसिद्ध विचारक और दार्शनिक मेकाइवल ने अपनी पुस्तक 'The Prince' इटली के राजकुमारों की शिक्षा-दीक्षा के लिए लिखी थी, उसी प्रकार कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र की रचना सम्राट चन्द्रगुप्त को राजकार्य-संचालन के सभी कलाओं से पूर्ण करने के लिए की। इस महाकृति की रचना की तिथि के सम्बन्ध में मतभेद है, किन्तु सामान्य रूप से इसकी अवधि 321–396 ई० पूर्व मानी गयी है। देवभाषा में लिखित यह पुस्तक 15 अध्यायों तथा 430 पृष्ठों में है।

प्राचीन भारतीय दर्शन में यद्यपि भौतिक दृष्टिकोण की प्रधानता मिलती है, परन्तु सांसारिक जीवन एवं आर्थिक उद्देश्यों की भी उपेक्षा नहीं की गई है। यही कारण है कि मानव जीवन के मुख्य उद्देश्यों और पुरुषार्थों में धर्म, काम और मोक्ष के संग अर्थ को भी

शामिल किया गया था। कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी इसी दृष्टिकोण का परिचायक है जिसमें उन सभी क्रियाओं का उल्लेख मिलता है जो धर्म, काम और मोक्ष को प्रवृत्त करते हैं। स्वाभाविक ही है कि कौटिल्य का अर्थशास्त्र विविध ज्ञातव्य विषयों की एक निधि बन गया है जिसमें राजनीति, अर्थनीति तथा समाजनीति विषयक अनेक तथ्य सन्निहित हैं। इस प्रकार कौटिल्य का अर्थशास्त्र आधुनिक आर्थिक साहित्यों की तरह नहीं है। इसका क्षेत्र अत्यन्त ही विस्तृत है जिसके अन्तर्गत सामाजिक प्रथाओं, लोकोक्तियों, उत्तराधिकार, दाय तथा धार्मिक कृत्य पर्दा-प्रथा, स्त्रियों की स्थिति, विवाह तथा तलाक जैसे सामाजिक तथ्यों, शासन-पद्धति, शासन-विधान, राजा के अधिकार एवं दायित्व, राज-दरबार-नियम, मंत्री एवं मंत्रिपरिषद्, प्रमुख राज्य कर्मचारी एवं उनके कार्य, जल तथा थल सैन्य व्यवस्था, नगर प्रबन्ध, ग्राम्य शासन न्याय-व्यवस्था, वैदेशिक नीति, कूटनीति जैसे राजनीतिक विषयों तथा राजस्वनीति, राजकोष, राजकोष हस्तक्षेप, सार्वजनिक कल्याण, व्यापार, जनसंख्या, कृषि-व्यवस्था सामाजिक सुरक्षा, श्रम की महत्ता, कीमत-नियन्त्रण, नगर-नियोजन, ब्याज, सूत-कताई एवं बुनाई जैसे आर्थिक विषयों को कौटिल्य ने सुसम्बद्ध रूप में स्पष्ट किया है। वास्तव में, प्राचीन भारत के शासन-तंत्र का एक सम्पूर्ण और सुन्दर चित्र इस अर्थशास्त्र में देखा जा सकता है। कौटिल्य ने प्रचलित आर्थिक विचारों की व्याख्या के साथ-साथ अपने विचार भी प्रस्तुत किये हैं।

संक्षेप में कौटिल्य के आर्थिक विचार निम्नलिखित हैं—

वैदिक युग से ही धन अर्थात् अर्थ को चार पुरुषार्थों में से एक माना जाता था, फिर भी इसकी प्राप्ति एवं उद्देश्यों को नैतिक एवं धार्मिक कसौटियों पर कसा गया था। कौटिल्य के धन सम्बन्धी विचार भी इन्हीं विचारों से प्रेरित थे। अपने एक श्लोक में कौटिल्य ने यह कह कर कि 'अर्थार्थ प्रवर्तते', लोक धन को महत्ता प्रदान की थी। किन्तु उनके अनुसार जिस प्रकार विद्या को प्रतिक्षण प्राप्त किया जाता है, ठीक उसी प्रकार धन को भी कण-कण कर प्राप्त करना चाहिए। कौटिल्य ने उसी धन को उचित माना था जो उचित रीति से प्राप्त किया जाता है। अतः धन जीवन का अन्तिम उद्देश्य नहीं, बल्कि पुरुषार्थों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है।

कौटिल्य ने अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में (जिसे वे वार्ता कहते हैं) कृषि को शीर्ष स्थान दिया है। उन्होंने माना है कि कृषि ही वह व्यवसाय है जिससे अनाज, पशुधन, सोना, धन सम्पदा तथा सस्ता श्रम प्राप्त होता है। उन्होंने कहा है कि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय भी कृषि व्यवसाय को अपना सकते हैं, किन्तु उनके विचार में ब्राह्मण को मात्र हल नहीं छूना चाहिए।

कौटिल्य ने आलसी व्यक्तियों को निकम्मा कहा है तथा उन्होंने कहा है कि समाज में आलसी व्यक्तियों को जीने का कोई अधिकार नहीं है। साथ ही उन्होंने श्रम का गुणगान करते हुए कहा है—

अलब्धलाभो नालसस्य
आलसस्य लब्धमपि रक्षितुं न शक्यते।
न चालसस्य रक्षितु विवर्धते
न भृत्यान प्रेषयति॥

अर्थात् परिश्रमहीन पुरुष को श्री (धन) अथवा किसी अन्य वस्तु की प्राप्ति नहीं होती। आलसी पुरुष तो मिली हुई वस्तु की रक्षा करने में भी असमर्थ होता है।

कौटिल्य की विचारधारा में सार्वजनिक वित्त के नियमन का भारी महत्व है, क्योंकि उन्होंने इसे राष्ट्रीय आय के मेहराब का एक भारी स्तम्भ माना है। सारे राज-कार्य कोष पर ही निर्भर हैं, इसलिए उन्होंने राजस्व के महत्व को व्यक्त करते हुए लिखा है कि सभी क्रियायें तथा प्रशासन वित्त पर ही निर्भर होते हैं, अतः राजा को अपने कोषागार पर सर्वाधिक ध्यान देना चाहिए :

कोषपूर्वाः समारम्भाः, तस्मात्पूर्वं कोषमवेक्षेत।
आकर प्रभवः कोषः कोषाद्दण्डः प्रजायते।
पृथ्वी कोषदण्डाभ्यां प्राप्यते कोषभूषणा।

गैरोला ने कौटिल्य द्वारा वर्णित कर प्रणाली को स्पष्ट करते हुए लिखा है—"कर प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जो प्रजा के लिए भारस्वरूप न हो। राजा को मधुमक्खी के समान काम करना चाहिए जो, पौधों को असुविधा पहुँचाए बिना शहद का संचय कर लेती है।" कौटिल्य ने आय के तीन स्रोत—(i) देश के अन्दर उत्पन्न होने वाली वस्तुओं पर लगाए गए कर से प्राप्त आय (ii) राजधानी में उत्पादित वस्तुओं पर लगाए गए कर से आय तथा (iii) आयातों तथा निर्यातों पर लगे हुए करों से प्राप्त आय—बतलाए हैं।

कौटिल्य ने समाहर्ता की आचार संहिता का भी वर्णन किया है। उनके अनुसार बुद्धिमान समाहर्ता वही है जो राज-धन का संचय करे और धन की आय तथा वृद्धि और व्यय का पूरा हिसाब रखे। वह व्यय की कमी आय की वृद्धि के लिए यथोचित उपाय करे—

एवं कुर्यात्समुदयं वृद्धिं चायस्य दर्शयेत।
ह्रासं व्ययस्य च प्राज्ञः साधयेच्च विपर्ययम्॥

कौटिल्य महोदय ने एक आदर्श राजा तथा आदर्श राज्य का विस्तृत वर्णन किया है। साथ ही उन्होंने कहा है कि प्रजा के सुख और हित में ही राजा को अपना सुख समझना चाहिए।

इसी तरह कौटिल्य ने ब्याज, महँगाई, जनसंख्या, व्यापार तथा ग्राम्य और नगर नियोजन पर भी विचार प्रकट किये हैं।

इस तरह आचार्य कौटिल्य ने विभिन्न आर्थिक विषयों पर गूढ़ और व्यापक तथ्य प्रस्तुत किये हैं। भारतीय आर्थिक विचारों के इतिहास में कौटिल्य की तुलना एक मौलिक चिन्तक के रूप में की जा सकती है। यद्यपि उनके विचार विशुद्ध आर्थिक सिद्धान्त नहीं हैं, किन्तु उन्होंने जो कुछ भी कहा है, उसे अगर

आधुनिक सन्दर्भों में भी जाँचा जाए तो इसकी उपादेयता और सत्यता सिद्ध होती है। वस्तुतः व्याकरण के क्षेत्र में जो स्थान पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' का है, वही स्थान राजनीतिक आर्थिक साहित्य में कौटिल्य के अर्थशास्त्र का है। भारत के आर्थिक विचारों के आदि प्रणेता आचार्य कौटिल्य के इस अर्थशास्त्र को पढ़कर स्व० प्रधानमंत्री पण्डित नेहरू ने मुग्ध होकर सन् 1931 ई० में नैनी के बन्दीगृह से अपनी पुत्री इन्दिरा को लिखे गए पत्र में इसका विशेष उल्लेख किया था जो आज भी Glimpses of World History नामक ग्रन्थ में देखने को मिलता है।

आचार्य कौटिल्य एक आर्थिक विचारक ही नहीं थे, बल्कि उनके जो व्यावहारिक विचार इस क्षेत्र में प्रदान किये गए, उनका स्वागत न केवल भारतीय विद्वानों द्वारा हुआ है बल्कि विदेशी अर्थशास्त्रियों ने भी उनका स्वागत किया है। ज्ञान की शायद ही कोई ऐसी शाखा हो जिसे उनके विचारों के रूप में योगदान प्राप्त न हुआ हो। क्या धर्म, क्या नीतिशास्त्र, क्या अर्थशास्त्र तथा क्या राजनीतिशास्त्र-ज्ञान के सभी क्षेत्रों में कौटिल्य ने अपने विचार निःसंकोच व्यक्त किये हैं।

●

ब्राह्मण न किसी के राज्य में रहता है, न किसी के अन्न से पलता है। वह स्वराज्य में रहता है और अमृत होकर जीता है।

: प्रसाद

मुझे मेरे रिश्तेदारों से बचाओ

प्रो० प्रभात कुमार सिन्हा
इतिहास विभाग

एक दिन फोन आया—'सर, आपके दो-दो दामाद आये हुए हैं।' 'क्या बकवास करते हो ?'—मैंने डाँटा—'मेरी तो एक ही बच्ची है और वह भी छोटी; फिर मेरे दामाद कहाँ से आये ?' रामदीन और दीन होकर बोला—'हुजूर, वे तो अपने को आपका दामाद ही बता रहे हैं।' और फिर वैसे रिश्तेदारों का सिलसिला शुरू हो गया कि ....

इस कस्बाई शहर में अपनी पोस्टिंग की खबर सुनकर मैं फूला नहीं समाया था। यह इलाका मेरे घर से बहुत दूर था और मैंने पहले ही पता कर लिया था कि यहाँ मेरा कोई दूर का रिश्तेदार भी नहीं है। दरअसल मैं अपनी जाति के तथाकथित रिश्तेदारों से बड़ा घबराता था, अतः सुदूर एकान्त मिलने की खुशी में आनन-फानन में मैंने नयी जगह ज्वाइन कर लिया।

मुझे जो सरकारी आवास मिलने वाला था उसे खाली होने में कुछ दिन लगने थे, अतः मैं डाक बंगला में ठहर गया और बीवी बच्चों से दूर उस नये वातावरण में अपने को व्यवस्थित करने में लग गया। अभी दो-चार दिन भी नहीं बीते थे कि मेरे सहकर्मियों में काना-फूसी होने लगी कि साहब किस जाति के हैं। मेरे नाम में जातिसूचक कोई टाइटिल था ही नहीं, अतः सभी अटकलबाजी कर रहे थे। मेरा गम्भीर रूख देख किसी को प्रत्यक्ष पूछने की हिम्मत भी नहीं पड़ रही थी और पहली बार मुझे अपने पिता की उस दूरदर्शिता पर गर्व महसूस हुआ कि उन्होंने मेरे नाम में कोई टाइटिल नहीं जोड़ा था।

लेकिन अफसोस, अधिक दिनों तक मैं अपने चतुर सहकर्मियों से अपनी जाति का राज छुपा नहीं सका। एक सप्ताह बाद ही मेरे चाचा का पत्र घर से आया और उस पर लिखे पता से सहज ही मेरी जाति का अन्दाजा लोगों को लग गया। देखते ही देखते मेरी जाति का पता लग जाने की बात ऑफिस में जंगल में आग की भाँति फैल गई और मेरे लिये मुसीबतों का सिलसिला भी शुरू हो गया।

सबसे पहले तो ऑफिस के तीन कर्मचारी, जो दुर्भाग्यवश मेरी ही जाति के थे, मेरे आगे-पीछे करने लगे। अचानक उन तीनों सहकर्मियों की इज्जत मेरे ऑफिस में काफी बढ़ गई थी। अब वे कोई न कोई बहाना लेकर डाकबंगले पर भी मेरे सामने हाजरी देने लगे।

एक दिन मैं ऑफिस में अपने काम में व्यस्त था कि डाकबंगले से रामदीन का फोन आया।

"सर, आपके दो-दो दामाद आये हुए हैं।"

"क्या बकवास करते हो ? मेरी तो एक ही बच्ची है और वह भी छोटी। फिर मेरे दामाद कहाँ से आये?"—मैंने चपरासी को डाँटा।

रामदीन और दीन होकर बोला—"हजूर, वे तो अपने को आपका दामाद ही बता रहे हैं। मैं क्या कहूँ!"

मैं भागा-भागा डाक बंगला पहुँचा। मेरे कमरे में दो सज्जन पत्रिकाओं के पन्ने उलट-पलट रहे थे। कमरे में प्रवेश करते ही दोनों महानुभावों ने शर्माने का नाटक किया और मेरे पैरों पर झुक गये। मैंने संयत होकर मुस्कराने की कोशिश की। तभी उनमें से एक वाचाल हो गया—"आप तो हमें नहीं पहचानते ? हम आपके गाँव के रमनाथ जी के दामाद हैं।"

रमनाथ जी गाँव के रिश्ते से मेरे भाई ही थे। स्वभावतः दोनों मेरे दामाद बन गये थे। किसी तरह उन्हें चाय-नाश्ता कराकर तथा ११-११ रुपये देकर विदा किया, क्योंकि ऐसा नहीं करता तो सम्भव था, रमनाथ भैया रुष्ट हो जाते।

अगले ही दिन एक सज्जन दो बच्चों के साथ मेरे ऑफिस में घुस गये। मैं किसी काम में तल्लीन था। ज्यों ही मेरी नजर ऊपर उठी, वे सज्जन मेरे चरणों का प्रसाद लेने झुके। मैं तो गद्गद न हुआ, मगर वे जोरों में लगे अपने बच्चों को डाँटने—"अरे बेवकूफ, चरण छू लो, दादाजी को प्रणाम करो।"

मेरे नेत्र फैल गये। पहले तो भरी जवानी में ससुर बना; और अब दादा बनने की नौबत भी आ गई। बच्चे सकुचाते हुए मेरे पैरों पर झुके। मैं दिल से आशीर्वाद दे उन सज्जन को देखने लगा। उनके चेहरे पर गर्वीली मुस्कान थी, मानो वे कोई चुनाव जीत गये हैं। वे बोले—"चाचा जी, आज ही हमको मालूम हुआ कि आप यहाँ आ गये। आपके गाँव में विश्वंभर बाबू हैं न, वे मेरे दोस्त के भैया के चाचा के चाचा हैं, अतः आप भी तो मेरे नज-दीकी हुए न !"

मैंने संबंधों का निबटारा करने की अपेक्षा उनसे आने का कारण पूछा, तो वे बोले—"चाचा जी, आज आपको मेरे घर रात्रि-भोजन पर आना होगा।"

मेरे लाख मना करने के बावजूद वे मुझे संध्या अपने घर ले गये और जम कर भोजन कराया। भोजन वास्तव में जायकेदार था। पान देते समय अपनी जमीन के झंझट को सुलझाने का निवेदन मुझसे करने लगे। असली मुद्दे को सुनते ही मुझे भोजन का स्वाद कसैला लगने लगा। करता क्या न करता! यथा-संभव सहयोग का उन्हें आश्वासन दिया, लेकिन उस दिन समझ लिया कि नित्य नये बनते रिश्तेदारों के यहाँ खाने-पीने से तोबा करना ही बेहतर होगा। वैसे, इसकी जरूरत भी नहीं थी। महीना बीतते ही बीतते मेरा परिवार आ गया। दो-तीन दिन तो सामान व्यवस्थित करने में लग गये, उसके बाद तो फिर पुराने

परिस्थितियों के आने का सिलसिला ही चल पड़ा। अपनी जाति के लोगों से और रिश्तेदारों से जितना ही बचना चाहता था, उतमें उतना ही रम जाना पड़ा; जैसे, सिर मुड़ाते ही ओले पड़ते रहे।

एक दिन ऑफिस से थका-मांदा आया ही था कि शहर के एक वकील महोदय आ धमके। परिचय होने के बाद पहले उन्होंने मेरे विभाग को गिनकर पचास गालियाँ दीं। पता नहीं कितने दिनों से उन्होंने उन गालियों को इकट्ठा कर रखा था। मेरे विभागीय कर्मचारियों के ऐसे-ऐसे किस्से सुनाये कि मैंने चुप रहने में ही भलाई समझी। क्या पता, मुझ ही चपेट लें! बातों ही बातों में बहस का मुद्दा बिहार में जातिवाद बन गया। उसमें मेरे शरीक न होने का प्रश्न ही नहीं पैदा होता था। आखिर जातिवाद का मैं अव्वल दुश्मन जो ठहरा!

वकील साहब बोले—"अजी साहब, यहाँ तो जातिवाद की जड़ें इतनी गहरी हैं कि चपरासी से लेकर अधिकारी तक इसके पीछे पागल हैं। वे पक्षपात करते हैं।"

मैं ऐसा मौका भला क्यों चूकता! बोला—"सच पूछिये, मैं तो इसका भुक्तभोगी हूँ। मेरी जाति का पता लोगों को क्या चला मुझ पर तो पहाड़ ही टूट पड़ा है।"

अचानक वकील साहब बोले—"बाई द वे, आप किस जाति के हैं?"

मैं वकील साहब से प्रभावित था, क्योंकि जातिवाद से वे भी खिन्न थे। मैंने उन्हें सहज ही अपनी जाति बता दी। मेरी जाति का पता लगते ही खुशी से वे उछल पड़े—"अरे, वाह, साहब! गोदी में लड़का, नगर में ढिंढोरा!" "क्या मतलब?"—अब मेरे चौंकने की बारी थी।

वकील साहब खुशी से बोल पड़े—"अजी साहब, आप तो मेरी ही जाति के हैं।"

"हे भगवन, यह क्या मुसीबत आ गई!" मैं सोचने लगा।

वकील साहब भला कहाँ चूकने वाले थे! तपाक से उन्होंने मेरी जाति के दस संभ्रान्त व्यक्तियों से अपनी रिश्तेदारी का खुलासा कर दिया। भला हो, मैं उनमें किसी का रिश्तेदार नहीं था।

वकील साहब दाँव पर दाँव फेंके जा रहे थे। मैंने स्पष्ट शब्दों में कह दिया—"आप मेरी जाति के हैं, यह खुशी की बात है, पर मैं आपका रिश्तेदार नहीं हूँ।"

लेकिन वकील साहब भला क्यों मानने वाले थे! अन्ततः उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति की चर्चा चला दी, जो संयोग से मेरे बचपन का मित्र था। वकील साहब बोले—"अच्छा, आप तो दीनदयाल बाबू को जानते होंगे? वे तो आपही के इलाके के हैं न?"

"अरे, वे मेरे इलाके के क्या, मेरा भाई ही समझिये उन्हें।" आखिर मैं अपने पुराने मित्र को कैसे भूल सकता था!

"वाह, तब तो आप मेरे मामा हो गये!" इतना कह वकील साहब मेरे चरणों पर झुक गये। मैं भौंचक्का रह गया। आखिरकार वकील साहब ने चक्कर चला ही दिया। वे फिर चालू हो गये— दीनदयाल बाबू मेरे फुफेरे भाई की पत्नी के मामा हैं; और आपके दोस्त हैं। फिर आप भी तो मामा ही हुए न।"

………… और पत्नी को मामी बनने की खबर तथा इस नये रिश्ते की खुशी में जलपानादि का प्रबन्ध करने के लिये मैं भीतर चला गया। ●

महाराज कर्ण की 'समस्या'

प्रो० मिथिलेश कुमार झा

भौतिकी विभाग

बी० ए० क्लास में
भाषण झाड़कर
स्टाफ रूम में पहुँचे
महाराज कर्णजी बदहवास,
मिल गये
हिन्दी के हेड विनोद विश्वास ।
"क्यों भाई, विश्वास,
'समस्या' पुलिंग है या स्त्रीलिंग ?"
उत्तर मिला—"स्त्रीलिंग "
"तब तो हम क्लास में ठीक ही बोले।"
"क्या बोले ?"
"यही कि आजकल हमारे देश में
अनेक समस्याएं पैदी हो गयी है।"

अब थोड़ा सिर खुजलाइए

१। पटना के बीच में क्या है ?

२। अमेरिका के प्रथम प्रधान मंत्री कौन थे ?

३। दो हाथ की आलमारी में चार हाथ की मूर्त्ति कैसे रखी जा सकती है ?

—नीला कुमारी मिश्र
प्रथम वर्ष कला

४। पानी में निशि-दिन रहे, औ पानी में बास,
काम करे तलवार का, फिर पानी में बास।

५। लाल मुकुट, मुर्गा नहीं, सब्ज रंग, नहि मोर
लम्बी दुम, बन्दर नहीं, चार पाँव, नहि चोर

६। एक चिड़िया अद्भुत है,
नदी किनारे बोली है,
होंठ उसका सोने का,
दुम से पानी पीती है।

—कुमारी पुतुल
तृतीय वर्ष कला

...और अन्त में हँसगुल्ले खाइए

❀ प्रेमी-प्रेमिका की नयी नयी शादी हुई थी। पत्नी से पति ने जब एक रात गाने की जिद की, तो पत्नी ने गाना शुरू किया—

भैया मेरे, राखी के बन्धन को निभाना
भैया मेरे, छोटी बहन को न भुलाना ।'

फिर पत्नी ने जिद पकड़ ली पति से गीत सुनने की। पति ने भी बड़े भोलेपन से सुनाया –
'माँ, मुझे अपने आँचल में छिपा ले, गले से लगा ले,
कि और मेरा कोई नहीं '

—शीला कुमारी सिन्हा
प्रथम वर्ष कला

❀ एक विद्वान किसी जलसा में लोगों के प्रश्नों के उत्तर दे रहे थे। एक प्रश्नकर्ता ने प्रश्न नहीं पूछा था और गुस्सा कर पुर्जा पर लिख दिया था केवल— 'गधा!'

विद्वानने माइक पर कहा—'एक सज्जन ने अपना नाम तो पुर्जा पर लिख दिया, परन्तु प्रश्न लिखना वह भूल गए। मैं क्या उत्तर दूँ!'

❀ किसी कॉलेज (महिला कॉलेज नहीं) में एक छात्रा विज्ञान के वर्ग भी करती और कला के भी। किसी छात्रा ने पूछा–विज्ञान पढ़ती हो ?
'हाँ।' उसने उत्तर दिया।
'कला पढ़ती हो ?'— उससे दूसरी छात्रा ने उसी समय पूछा।
'हाँ।'—उसने उसे भी यही उत्तर दिया।
'आखिर पढ़ती क्या हो ?'- दोनों छात्राओंने एक साथ पूछा।
'मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान और गृह विज्ञान।'

—मधु कुमारी सिन्हा
प्रथम वर्ष विज्ञान

❀ पति महाशय मुँह लटकाए दरवाजे पर बैठे थे, तभी उनके एक मित्र ने आते ही पूछा—
'क्यों यार, इस तरह सिर पकड़े क्यों बैठे हो ?'
'क्या बताऊँ ? बीबी ने फूल फेंककर मारा है'— पति महाशय बोले।
'ओ, तो इसमें सिर पकड़ने की क्या बात है ?'
'है क्यों नहीं, फूल के साथ गमला भी तो था।'

—कल्पना झा
प्रथम वर्ष विज्ञान

❀ डॉक्टर, मेरी बीबी का ऑपरेशन होगा, अपेंडिसाइटिस का। जल्द आओ।'—पति ने अपने डाक्टर मित्र को फोन किया।

बेवकूफ ! पिछले साल ही तो इस केस का ऑपरेशन कर चुका हूँ। कभी सुना है कि एक व्यक्ति को दो बार अपेंडिसाइटिस हो सकती है ?'

और क्या तुमने यह नहीं सुना है कि एक व्यक्ति की दो बार शादी हो सकती है ?'

—शीला कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

❀ 'मान लो, ट्रेन के एक कम्पार्टमेंट में दो औरतें चुपचाप बैठी हुई हैं और...' सेलेक्शन कमिटी का सदस्य उम्मीदवार से प्रश्न करने ही जा रहा था कि उम्मीदवार ने बात काटी—
'इम्पॉसिबुल, आपका सवाल गलत है।'

—शोभा कुमारी
प्रथम वर्ष विज्ञान

१ एक सज्जन ने एक पत्रिका में अपना विज्ञापन दिया—"अति सुन्दर, गोरी-लम्बी, रेशम बालों वाली कन्या चाहिए।"

उत्तर में किसी युवती ने लिखा—

'श्रीमान जी, मेरा सुझाव है कि वैवाहिक विज्ञापन की बजाय अपना आर्डर आप किसी गुड़िया कम्पनी को भेजें।'

२ शीला ने नीना से कहा—'मुझमें और हेमा मालिनी में सिर्फ एक समानता है।'

नीना ने आश्चर्य से पूछा— 'वह क्या?'

'वह भी लक्स से नहाती है और मैं भी।'

शीला ने उत्तर दिया।

३ होने वाले ससुर से लड़के ने कहा—'जी, मैं आपसे ऐसी चीज चाहता हूँ जो पेट्रोल से चले'— लड़के की इच्छा दहेज में कार या स्कूटर लेने की थी।

ससुर ने मुस्कुरा कर चुटकी ली—

'ठीक है, मैं तुम्हें लाइटर जरूर दूँगा।'

४ एक खूबसूरत सेल्सगर्ल ने एक घर की घंटी बजाई। घर के मालिक ने घर का द्वार खोला तो सेल्स गर्ल ने पूछा—'क्या आपकी बेगम साहिबा घर पर हैं?'

मकान मालिक बोला— 'नहीं, लेकिन आप अन्दर आकर उनका इन्तजार कर सकती हैं, वह एक सप्ताह के लिए मायके गई हैं।'

—शोभना कुमारी

तृतीय वर्ष कला

मैथिली (जानकी) वन्दना

प्रस्तोता :

प्रो० रघुनन्दन यादव

अध्यक्ष, मैथिली विभाग

(प्रस्तुत पद मे जानकीक महिमाक बखान एहि प्रकारें कएल गेल अछि जे हुनक उत्पत्तिक सम्बन्ध मे गूढ़ार्थ सेहो निहित भऽ गेल अछि। ई कहबाक आवश्यक नहि जे रचनाकार थिकाह महाकवि विद्यापति।)

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि नहि जननि, जनक नहि जाही॥
बसु नइहर सासुर के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेल बहि गाम॥
सासुक कोर मे सुतल जमाय।
सनचि विलहु तो विलहुल जाय॥
जाहि ओदर तें बाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेलि॥
भन विद्यापति सुकवि भान।
कवि कें कवि कहुँ कवि पहचान॥

हे महाराज (आश्रयदाता)! नित्य हुनक भजन करु जिनका ने जननी छन्हि, ने जनक। (जानकी पृथ्वी क गर्भ सँ उत्पन्न भेल छथि। ओ ब्रह्माक अयोनिज रचना छथि, अतएव अत्यन्त पवित्र छथि।) ओ नइहरे मे रहैत छथि सासुरक नाम पर। (अयोध्या, अतए जानकीक सासुर छन्हि, ओतहु हुनक माता पृथ्वी उपस्थित छन्हि, अतएव ओ ओतहु अपन नइहरे मे रहैत छथि।) ओ अपन सासुर अयोध्यो अपन जननी पृथ्वीक सिर चढ़िकः (अर्थात् पृथ्वी पर होइत) गेलीह। सीताक पति राम (पृथ्वीक जमाय) अपन सासुक कोर

मे सुतलाह । यदि समधि (रामक पिता) अपन समधिन सँ विलास करबाक इच्छा कएलन्हि, तँ ओ विलासक लेल उद्यत भऽ गेलीह । (दशरथ भूपति अर्थात् पृथ्वीक पति छलाह, तेँ ओ पृथ्वीक उपभोग कएलन्हि ।) जाहि गर्भ सँ जानकी बाहर अएलीह, ओहि मे पुनः समा गेलीह । (ओ पृथ्वी सँ उत्पन्न भऽ आखिर मे पुनः पृथ्वी मे समा गेलीह ।) विद्यापति अपन काव्यक अनुभूति व्यक्त करैत छथि—कविक काव्यक मर्म कविये बूझि सकैत छथि । (जे उत्तम कोटिक कवि होथि, सएह एहि पदक गूढ़ार्थ समझि सकैत छथि ।)

●

कान्ति कुमारी अछल अपन बाहुक स्वरूप देखबैछ
बार बार कऽ जीर्ण पुरातन किन्तु नूतन सिखबैछ

—बन्धु

लोकभाषा मैथिली आ गीतकाव्य

प्रो० छत्रिनेश्वर पाठक

मैथिली विभाग

अभिव्यक्तिक माध्यम थिक भाषा। जाहि अभिव्यक्ति सँ संवेदनात्मक अनुभूति उत्पन्न करइछ आ सकय, ओकरा साहित्य मे काव्य कहल गेल अछि। एहि काव्यक एकगोट प्रभेद थिक गीत। आउ, लोकभाषा मैथिलीमे गीतक परम्पराक एकटा भलकी देखी।

आचार्य विश्वनाथक कहब छनि—"छन्दोबद्ध पदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम्" ! अर्थात् छन्द सँ आबद्ध पद पद्य थिक आ जे पद्य दोसर पद्य स निरपेक्ष हो, से मुक्तक कहाबैत। एहि मुक्तक मे जँ गेयता छैक, त ओ गीत अछि।

लोकभाषा मे गीत रचनाक परम्पराक आरम्भ बौद्धसिद्ध लोकनि कयलन्हि जे चर्यागीत ओ विनश्रीक गीतिकाक रूप मे उपलब्ध अछि। चौदहम शताब्दी मे कविशेखर ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने केवल अपन 'वर्ण रत्नाकर' मे विस्तार सँ संगीतक अंग-उपांगक विवरण देल, अपितु अपन नाटक 'धूर्तसमागम' मे राग-तालबद्ध लोकभाषाक गीतक सेहो समावेश कयल। संस्कृत वाङ्मय मे मुक्तक काव्य त पाठ्य काव्यक रूप मे रहल अछि। सर्वप्रथम जयदेव ओहि मे गेयधार्मिकताक समावेश कयलनि। मैथिली साहित्य मे गीत काव्यक परम्पराक प्रथम सूत्र चर्यापदे मे भेटैत अछि। चर्यापदक अतिरिक्त डाक ओ घाघक वचन सेहो मैथिली गीत काव्यक अमूल्य निधि थिक। डाक ओ घाघक पद लोक जीवन सँ सम्बद्ध कटु सत्य ओ अनुभवसिद्ध यथार्थ पर आधारित अछि। वर्णरत्नाकर मे वर्णित मिथिला मे प्रचलित अनेक प्रकारक गीतिकाव्यक नाम भेटैत अछि, यथा—लोरि, बिरहा, मलनी, लोरिक नाच ओ मएना आदि एखनहुँ प्रचलित अछि। वर्णरत्नाकर मे वर्णित नृत्य संगीत मिथिला मे प्रचलित गीत-परम्पराक सुदृढ़ आधार अछि। परंच आचार्य रमानाथ झाक शब्द मे संगीतक परम्परा वर्णरत्नाकर सँ कतोक सए वर्ष पूर्वहि सँ मानए पड़त। एगारहम शक शताब्दीमे एहि संगीतक ततबा प्रचार भए गेल छल, ततेक विकास भए गेल छल जे जयदेव एकर प्रयोग प्रथमहि प्रथम संस्कृत मे कएल। एहि सँ कल्पना कएल जा सकैछ जे मिथिला ओ मिथिलाक सन्निहित जनपद मे संगीतक शास्त्रीय पद्धति सँ अध्ययन अनुशीलन बड़ प्राचीन समय सँ आबि रहल अछि। संगीतक आधार भेल गीत, ओ से गीत जनपदीय भाषा मे रचित होइत छल जकर प्रमाण थिक बौद्धगान।

महाकवि विद्यापति केँ चर्यापद, गीतगोविन्द, विनयश्री ओ ज्योतिरीश्वरक गीत परम्परा प्राप्त छलनि। ई निर्विवाद सत्य अछि जे अपन गीतक हेतु ओ प्राण तत्व जयदेवहि सँ प्राप्त

कहबै छलाह आ तें अभिनव जयदेव नामे ख्यात भेलाह। डा० मुनीश्वर झा विद्यापति पदावली मे अपन विचार व्यक्त करैत लिखलन्हि अछि जे विद्यापति पदावली मे वर्णित राधाकृष्ण विषयक प्रेम गीतगोविन्दक परम्परहि मे अछि। पदावली मे वर्णित लीला विलास सँ प्रेमक ऐश्वर्य ओ माधुर्यक पूर्णता सिद्ध अछि। तावत कवि विद्यापतिक हृदय मे भक्ति भावना छलन्हि, मुदा ओ सर्वोपरि कवि छलाह। मध्यकालीन भारतीय काव्य मे भक्तिभाव सँ ओतप्रोत ओ दिव्य प्रेम-भावक दर्शन होइत अछि। लोकभाषा मैथिली मे गीतकाव्यक सर्वश्रेष्ठ रचनाकार अभिनव जयदेव विद्यापति वस्तुतः सौन्दर्यक अनन्य उपासक छलाह। सौन्दर्य हुनका लेल सनातन सत्य छल आ ओही मे प्रेमक निवास पर्यन्त छलाह। सौन्दर्य हुनक जीवनक दर्शन छल आ सौन्दर्य हुनक जीवनक दृष्टि-सृष्टि। हिनक गीत मे भिन्नताक अनुपम सरसता, मनमोहक माधुर्य ओ सौन्दर्यक परम अभिव्यक्ति भेटैत अछि। कवि अपन गीत मे, प्रेम-मन्दिर मे प्रवेश कए प्रेमक पूजा कएलन्हि अछि।

लोकभाषा मैथिली मे गीतकाव्यक परम्परा :—

यद्यपि मैथिली मे विद्यापति सँ पूर्वहु मे गीत परम्पराक आरम्भ भए गेल छल मुदा जखन विद्यापति भाषा-गीत रचना सँ अभूतपूर्व ख्याति अर्जित कएलन्हि तखन हुनक अनुकरण ओ अनुसरण मे विद्यापतिक समकालीन ओ परवर्ती कवि लोकनि, यथा—अमृतकर, भीषम, राजसिंह, कविराज, भिखारी मिश्र, नव कविराज यशोधर, कंसनारायण, लोचन, हरपति, रमानाथ, भानुनाथ, भीषम ठाकुर, सिद्ध नरसिंह मल्ल, भानुकवि, कंचन आदि कविगण एहि मैथिली गीत काव्य परम्परा के आगा बढ़ौलन्हि। हिनका लोकनिक गीत भाव, भाषा, भास, विषय सब दृष्टियें विद्यापतिक अनुकरण-अनुसरण अछि। विद्यापतिक गीत तिरहुति नामे प्रख्यात भेल आ भास ओ विषयक भेदें अनेक नामें परिगणित होमय लागल। एहि मे मान, योग, सोहर, फागु, मलार, बटगबनी प्रभृतिक गीत विशेष रूपें व्यापक भेल।

गीत दुइ प्रकारक होइत अछि—लौकिक गीत आ साहित्यिक गीत। लौकिक गीत मे साहित्यिक अंग सबहिक विशेष ध्यान नहि राखल जाइत अछि। लौकिक गीतसँ लोक विभिन्न अवसर पर नाच, गान ओ वाद्य सँ अपन मनोरंजन करैत आयल अछि। एकर विपरीत साहित्यिक गीत मे गीतक सभ अंगक ध्यान राखल जाइत अछि। संगीतक स्वर मानव-मन केँ सांसारिक यथार्थ सँ ऊपर उठाय कल्पना जगतधरि पहुँचाय दैत छैक। गीत मानवक सहज प्रकृति थिक, मुदा एहनो व्यक्ति भेटैत छथि जिनका गीत सँ आनन्द बोध नहि होइत छन्हि। कहलो जाइत अछि—

साहित्य संगीत कला विहीनः
साक्षात् पशुः पुच्छ विषाणहीनः ।
तृणं न खादन्नपि जीवमानः
तद् भागधेयं परमं पशूनाम् ॥

विनम्रता

अर्चना कुमारी
तृतीय वर्ष कला

जीवनक पथ बड़ कठिन छैक। जीवन-मार्ग मे सफलता पूर्वक यात्रा करबाक समय अनेक संकट, व्यवधान आ बाधा अबैत छैक। जीवन मे सफलता प्राप्त करबाक लेल जाहि गुण सभक परम आवश्यकता छैक ओहि मे विनम्रता सर्वोपरि अछि।

मर्यादाक संग विनीत भाव सँ सभ कार्य कें करब विनम्रता थिक। जीवन मे विनम्रताक बड़ उच्च स्थान छैक। जे व्यक्ति सीधा देखि कें चलैत अछि, ओ ठेस सँ अवश्य बचैत अछि, जे ऊपरे-उप्पर चलैत अछि, ओ ठोकर खाए धरती पर खसि पड़ैत अछि। बिहाड़ि अबैत छैक। पैघ सँ पैघ गाछ जड़ि सँ उखड़ि धराशायी भ' जाइछ मुदा नरपातक वन निहुड़ि कए बिहाड़ि के पीठ पर सँ पार कए दैत अछि आ पश्चात् पुनः टनटना कए पूर्ववत् ठाढ़ भ' जाइछ। अपन विनयहीनता वश नष्ट होइछ नरपत अपन विनम्रताक बल बचैत अछि। विनम्रता जीवनक महान गुण थिक। धरतीक आदर्श उदाहरण थिक। धरती के कोड़ि दिऔक, धरती पर थूकि दिऔक, आगि लगा दिऔक, धरती पर कोनो असरि नहि, कोनो प्रभाव नहि।

विनम्रता मानव हृदयक एक नैसर्गिक गुण थिक, विनम्रता सँ हीन हृदय व्यर्थ थिक। हृदय जतेक विशाल होइत अछि ओ विनम्रताक कारण, व्यक्ति महान होइत अछि विनम्रताक कारण। संसार मे जतेक लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति भ' गेल छथि, ओ सभ विनम्र छलाह।

विनम्रता एक अभ्यासक वस्तु होइछ। अहंकार, हठ, दम्भ आदि कें परित्याग कए व्यक्ति नत भाव सँ जीवनक सभ क्षेत्र में आगाँ बढ़ैछ। अभ्यास करैत-करैत ई गुण ओकरा मे समाविष्ट भ' जाइछ आ एक दिन विनम्रता व्यक्तिक रोम-रोम मे भरि जाइत छैक।

विनम्रता बलवान गुणक होइछ। दुर्बल व्यक्ति विनम्र कथमपि नहि भए सकैछ। डेरबुक व्यक्तिक लेलें विनम्रताक कोनो महत्व नहि।

जखन वृक्षक डारि फल-फूल सँ बोझिल भए जाइत छैक तँ ओ ओतहि झुकि जाइछ। आकाश मे उमड़ल-घुमड़ल मेघ जखन जल सँ भरल रहैछ तँ नीचाँ उतरि अबैछ। विद्वान गुणी वा सज्जन व्यक्ति, विद्या, गुण, आ सज्जनताक कारणेँ आओर अधिक नत भ' जाइत छथि। नम्रता व्यक्ति कें महान बना दैत छैक। गंगा विनम्रताक प्रतिमूर्ति थिकीह, जिनका जल मे पापी, पुण्यात्मा, विद्वान, मूर्ख, स्वस्थ पीड़ित सभ स्नान कए पवित्र होइत छथि। एक लेखक लिखैत छथि— "विनम्रता मे त्याग अछि, आ

त्याग मे जीवन, विनम्रता मे सेवा छैक आ सेवा मे अमरता, विनम्रता मे निर्मलता छैक, निर्मल-ता मे स्वर्ग, विनम्रता मे सत्य छैक आ सत्य मे ईश्वर। महिमामयी विनम्रताक हृदय मे प्राणी समूहक निवास छैक।"

छात्रगण के विशेष विनयशील होमक चाही। अपना माता-पिता, गुरुजन-परिजन सं विनत भए व्यवहार करक चाही। विनयावनत व्यक्ति कतहु लज्जित नहि होइत छथि। किन्तु कालक हेतु विनयशील व्यक्ति के अपमानक बोध भलहि होइन्ह। परन्तु अन्तोगत्वा जीत विनय केर होइत छैक, विनयशील होमक चाही।

विनयशीलता एक अपूर्व गुण थिक, ईश्वर क वरदान थिक, जीवनक सौन्दर्य थिक आ व्यक्तिक आभूषण थिक। अतः नर-नारी सभ के सर्दिखन विनम्र होमक चाही।

-o-

बदलू समाज

माला कुमारी

तृतीय वर्ष कला

बदलू समाज, छोड़ू कुआरि
निज स्वास्थ के पहिने छोड़ू
होयत सुधार तखनहि विकास
मानवता सं नाता जोड़ू !

होयत सशक्त सभ के मिलने
न ई काम रहत कोनो परले
नहि पड़ल रहू मायक ऊपरे
सभ किछु होयत कर्त्तव्य बले।

नहि पड़ल रहू, निद्रा तोड़ू
माया ममता सं मुँह मोड़ू
जँ देर बितत तँ पछतायब
तँ जन-जन सं नाता जोड़ू।

अछि प्रजातंत्र, सभ अछि स्वतंत्र
जे इच्छा हो से-से काज करु
ढाई आखर केर 'प्रेम' शब्द सँ
जन-मानस पर राज करु।

स्त्री-मुक्ति

शोभा कुमारी
तृतीय वर्ष कला

कहल गेल अछि जे एक निमिषक पराधीनता सँ बढ़ि कऽ अछि मृत्यु, आ दासताक हलुआ सँ बढ़ि कऽ अछि मुक्तिक मूँगफली। स्त्री युग-युग सँ दासी बनल आ रहल अछि। की ओकर मुक्ति आवश्यक नहि ?

आई २०मी शताब्दी मे कोनो एहन क्षेत्र नहि अछि जतए स्त्री अपन मुख्य स्थान नहि बनाए लेने होथि। राजनिति सँ लऽ कऽ अन्य प्रकारक व्यवसाय मे महिला वर उन्नति कए-लन्हि अछि। तइओ जखन ई सुनै छी जे स्त्री केँ पूर्ण रुपेण मुक्ति नहि भेटल छन्हि। तँ प्रश्न उठैत अछि जे स्त्री कोन प्रकारक मुक्ति पएबाक जिज्ञासा करैत छथि ?

स्त्रीक मुक्ति अर्थ किछु व्यक्ति पुरुषत्व या घर गृहस्थी सँ मानैत छथि। स्त्रीक मुक्ति अर्थ ई लेल जाइत अछि जे पति घर मे बैसि नेना केँ सम्हारथि आओर पत्नी बाहर काज पर जाइथि। स्त्री-मुक्तिक कल्पना समाज मे किओ व्यक्ति एखन स्वीकारबाक हेतु तैयार नहि होइत छथि।

स्त्री-मुक्ति सही अर्थ ई अछि जे स्त्रीकेँ पुरुषक सदृश अधिकार भेटबाक चाहियन्हि। हमरा लोकनिक पौराणिक व्यवस्था मे आइयो पुरुषे केँ प्रधान बुझल जाइत छैन्हि। एहि व्यवस्था मे स्त्रीक स्थान सदा निम्न रहल अछि। बालिकाक जन्म लैत समस्त परिवार शोक सँ डूबि जाएत अछि। एन स्थिति मे स्त्रीक स्वतन्त्रता होएबा मे बाधा करैत अछि। स्त्री कोनो भोगक वस्तु थिक, एहन नहि बुझि ओकरा विकासक दिशा मे देब। आधुनिक समयो अत्यावश्यक अछि। एकर अर्थ अछि जे स्त्रीकेँ पुरुषक सदृश समानता पर विशेष ध्यान देल जाए। स्त्री-मुक्तिक अर्थ इएह अछि जे स्त्री पुरुष के संगे रहबाक चाही, सभ पुरुष हुनका आदर सँ देखथुन्ह आओर ओकरा तुच्छ नहि बुझथुन्ह। वस्तुतः एहन देखल जाइत अछि जे पुरुष सर्वदा अपन अधिकार स्त्री पर कोने रहैत अछि" एक घर मे स्त्री पुरुष दुनू नौकरी करैत छथि। जखन दुनू गोटए थाकल देही ऐल घर पहुँचैत छथि तँ पुरुष आराम सँ बिछा-ओन पर पड़ि रहैत छथि परन्तु स्त्री से नहि कऽ पबैत छथि। घर मे प्रवेश करितहि चाय, भोजन एवं अन्य काज मे जुटि जाइत छथि। वास्तव मे थाकल तँ दुनू रहैत छथि परञ्च पतिक ध्यान मे ई नहि अबैत छन्हि जे हुनक पत्नी सेहो थाकल होइथिन्ह। बड़ कम घर एहन हएत जतए पति-पत्निक काज मे सहायता करैत छथि। जे सभ व्यक्ति एहन करैथि स्त्रीकेँ अवश्य आराम भेटतन्हि। जे काजुक महिला छथि,

ओ काज करए तँ जाइत छथि परञ्च हुनक ध्यान सदा घर आओर बच्चाक आवश्यकता पर केन्द्रित रहैत छन्हि । पति केँ ई बात अवश्य ध्यानमे रहैत छन्हि जे पत्नीक एक नोकरीकरबा हमर परिवारक कमाई अधिक अछि परंच पत्नीक लेट सँ अएब ओफीसक पुरुष सँ गप्प करब हुनका कनिओ नहि सोहाइत छन्हि पति पत्नी केँ नोकरी करबाक आदेश तँ दैत छथिन्ह परञ्च संगहि संग इहो चाहैत रहैत छथि जे पत्नी-पतिक आराम आवश्यकताक विशेष ध्यान राखथि । अगर पत्नी एहि कार्य मे कनिओ असमर्थता व्यक्त करैत छथि तँ तुरन्त हुनका दोषी ठहराए कोनो ने कोनो लाँछन लगाओल जाइत छथि । एहि हेतु पुरुष समाजमे परिवर्तनक आवश्यकता पर बल देब परमावश्यक अछि। जतए स्त्री पुरुष एक दुनू मोटए दोसर केँ नीक जकाँ व्यवहार करथि ।

इएह कारण थिक जे स्त्रीक मुरझल-मुरझल निकलि "मुक्ति" शब्द केँ दोहराबए लगलीह परञ्च सभसँ जरूरी अछि जे स्त्री स्वयं अपन आओर अपन अधिकार केँ नीक जकाँ सोचथि। स्त्री मुक्तिक हेतु जे कोनो अनवाक छन्हि तँ पहिने पिछड़ल समाजक स्त्रीकेँ शोषित कए हुनका स्वावलम्बी बनाएब आवश्यक छन्हि। शिक्षित रहला पर ओ स्वयं समाज मे अपन अधिकार बनाए देतीह ।

सत्य धरती, सत्य थिक आकाश,
परम सत्य मनुक्ख आपनहि थीक ।

—यात्री

विद्यापति जयते

सरिता कुमारी
प्रथम वर्ष कला, क्रमांक-२४

विद्यापति जयते, जयते - जयते
आसमान-धरती नित गाबए - विद्यापति जयते

देसिल बयना सबजन चाहथ
माटि-पानि केर धर्म निबाहए

सीता केर आँगन स्नेहक कविता पारावती
विद्यापति जयते—जयते—जयते

''बालचन्द विज्जावई भाषा
दुहुनहि लागइ दुज्जन हासा''

लाज राखि कोकिल गाओल कवि मधुस्वर बिन भयके
विद्यापति जयते, जयते—जयते

ककरा सुनाउ ?

शेफाली झा
तृतीय वर्ष कला

बहुत बितल, किछु बाँचि रहल
सेहो बितबे हाथ मलब
नहि बेसी हम कहब
दुख - पीड़ा स मोन भरल।

शिखर ऊब अछि टूटि रहल
तेकरो हमरा दर्द बनल
बाट - घाट अछि कीच भरल
मौन बनल छी देखि रहल।

गाछ - वृक्ष अछि ठूठ बनल
पात ओकर छै खसि पड़ल
फल कतएसँ देत भला
जड़िए पर नहि ध्यान रहल।

गप्प सप्प मे समय बितल
तृणक बोझसँ केश उड़ल
खेत - पथार बिका' रहल
गहनो सभ बन्धके पड़ल।

चार हमर अछि चूबि रहल
बेटा बेचि बजार भरल
जाति-दोस छी पीटि रहल
केहन हमर व्यापार बनल।

घर भात नहि, बाहर भात

रागिनी कुमारी
तृतीय वर्ष कला

शिवकान्त नामक पंडित छलाह, हुनक विवाह नहि होइत छलन्हि। ओ एक दिन भगवान सँ हाथ जोड़ि कए विनती कएल— हे भगवान, जँ हमरा एहि बेर विवाह भए जाएत तँ हम एकटा ब्राह्मण भोजन कराएब। पंडित जी बड़ घबड़ाइत जाइत छलाह। रस्ता मे एक कन्यागत भेटलथिन्ह आ हुनका सँ पुछल जे हुनका गाम मे विवाहक हेतु केओ छथि? ओ झट सँ उत्तर देल— हम स्वयं छी। हम एकोटा पाइ कौड़ी नहि लेब। कन्यागत बड़ प्रसन्न भेलाह आ शिवकान्तक विवाह भए गेलन्हि। जखन हुनक विवाहक एक वर्ष बीति गेल तखन अपन पत्नी सँ कहलन्हि— सुनैत छी, हमरा विवाह नहि भेल रहए तखन हम भगवान सँ प्रार्थना कएल जे हमरा विवाह भए जायत तखन हम एकटा ब्राह्मण भोजन कराएब। तेँ आइ हम ब्राह्मण भोजन कराएब। अहाँ इन्तजाम-बात करू आओर हम नोत देबे चलैत छिअन्हि। ओ एकटा वृद्ध ब्राह्मण केँ नोत देबए पहुँचलाह। कहलथिन्ह जे हम नोत देबए आएल छी, जे-जे रुचि हुए, कहल जाए। हम इन्तजाम करब। पंडितजी बजलाह— ओह, किछु नहि, हम बड़ थोड़ मात्रा मे खाइत छी। भटर-भटर के रोटी, घी के पूरे पचास। आ घरि बेलना नहि टूटत ता धरि हम नहि उठब। शिवकान्त ई सुनि अवाक रहि गेलाह आ ओतए सँ विदा भए एक नवयुवक पंडितजी ओहिठाम गेलाह। कहलथिन्ह— हम नोत देबए आयल छी। जे इच्छा हुए सएह, कहल जाय, हम इन्तजाम करब। नवयुवक ब्राह्मण कहलथिन्ह—हम बड़ कम खाइत छी। एक बोरा चूरा, बीस तौला दही, एक बोरा चीनी, बस एतबहि हमर मात्रा अछि। ई सुनि शिवकान्तक माथ सुन्न भए गेल आ ओतए सँ विदा भए कए एकटा नेना पंडितजी ओहिठाम गेलाह आ कहलथिन्ह जे हम नोत देबए आयल छी। नेना बजलाह--हम तँ नोत नहि खाइत छी, परञ्च अहाँ कहैत छी तँ हम स्वीकार कए लैत छी। शिवकान्त पुछलथिन्ह जे की-की खाएब, से सब हम इन्तजाम करी। ओ नेना बजलाह-किछु नहि, कम मात्रा मे चूरा, आधमन दही एक मन चीनी, आधमन अम्मट, बस, आओर किछु विशेष नहि। शिवकान्त— 'ओ! छोट मिरिच के मोट नाहरि' कहि विदा भए गेलाह। तत्पश्चात् एक दरिद्र ब्राह्मण लग पहुँचि नोत देलन्हि। ई ब्राह्मण खुशी सँ नाचि उठलाह आ सोचलाह जे आइ ढेर दिन पर यजमान फँसलाह अछि। हम हिनका आइ छोड़ैबन्हि। शिवकान्त कहलथिन्ह जे कहल जाए, हम इन्तजाम करब। ब्राह्मण कहल

-लन्हि—दू सए पान चूड़ा, एक सए ग्राम दही आओर चीनी हुए तँ हुए, नहि तँ नोन-मिरचाइ। बस, आओर किछु नहि। शिवकान्त खुशी सँ विदा भए गेलाह। ब्राह्मण कें नोत दए कए ओ जखन घर पर पहुँचलाह तँ पत्नी सँ पुछलन्हि-की सभ घर मे नहि अछि? कहू हम आइए बजार सँ लाबए। पूरा अछि? पत्नी कहलथिन्ह जे चएह टा नहि अछि, आओर तँ सभ किछु अछि। शिवकान्त फेर पुछलथिन्ह जे दही अछि? पत्नी—चएह टा नहि अछि, आओर तँ सभ किछु अछिए, चीनी अछि नहि। शिवकांत पत्नी पर गरमाइत कहलथिन्ह जे तखन सँ अहाँ कहैत छी जे 'चएहटा नहि अछि, आओर तँ सभ किछु अछि? चहएटा नहि अछि आओर तँ सभ किछु अछि।' हमरा बुझि पड़ैत अछि जे घर मे किछु नहि अछि। पुनः शिवकांत पत्नी कें कहलथिन्ह-बजार सँ लए कए झटदे अबैत छी। आ जौं ब्राह्मण एहि बीच आबि जाथि तँ अहाँ ठाउँ-पीढ़ि, पानि देबैन्हि। हम तावेत चलि आएब। एतेक कहि शिवकांत बजारक हेतु प्रस्थान कएलन्हि।

शिवकांतक पत्नी सोचलीह - हम सभ खाएबे नहि करब आ ई ब्राह्मण खएताह? आइ हम नीक सँ सुआ देबैन्हि सरधुए कें। तावत ब्राह्मण हाक दैत पहुँचलाह। शिवकांतक पत्नी पानि-पीढ़ि लगाए कए बैसाए लेल देलथिन्ह आओर कहलथिन्ह जे ओ दौड़ले बजार सँ अबैत हएताह। ब्राह्मण पैर-हाथ धोअ कए पीढ़ि पर बैसलाह आओर शिवकांतक पत्नी एकटा ओरही लए कए हुनका सोझा बैसि रहलीह। फेर चएह ओरही लए कए खन ओ घर दौड़ि कए जाथि, खन दौड़ि कए बाहर आबथि। कखनो ब्राह्मणके सेहो देखाए दैत छलथिन्ह। ई लीला देखि ब्राह्मण सोचए लगलाह। किछु कालक पश्चात् ब्राह्मण पुछलथिन्ह—कनियाँ, अहाँ ई ओरही लए कए किएक एना करैत छी? ओ बाजि उठलीह- ओ कहिकए गेलाह जे ब्राह्मण कें खुआ-पिआ कए दाँत तोड़ि देबैन्हि। ब्राह्मण ई सुनि भयसँ काँपए लगलाह। ओ एम्हर तकलाह, ओम्हर तकलाह आ पड़ाए गेलाह। शिवकान्त बजार सँ अएलाह तँ पत्नी सँ पुछलथिन्ह—ब्राह्मण आएल छलाह की? ओ बजलीह—हँ, हँ, ओ आएल छलाह, आओर हमरा सँ ओरही माँगैत छलाह। हम नहि देलिअन्हि तँ ओ तमसा कें पड़ाए गेलाह। शिवकान्त ई सुनि ओरही लए कए दौड़लाह आओर हाक देबए लगलाह। ओरहो देखतहि ब्राह्मण कछुआक चालि छोड़ि हिरनक चालि पकड़लाह।

गप्पे सँ समाप्त करी :-

शारदा बख्शी, प्रथम वर्ष कलाक समसामयिक गप्प

एक महाशय कतेको दिन तक रेल-यात्रा कऽ एकटा होटल मे अपनाहु जे मोन सँ सूतब। होटल रेलवे स्टेशनक निकटहि छल, तेँ ट्रेनक आवाजसँ हुनका निन्न नहि होइनह। हारि-दारि कऽ ओ काउन्टर इन्चार्ज सँ पुछलथिन्ह— 'ई होटल दिल्ली कखन पहुँचतैक?

× × × ×

माधुरी कुमारी, प्रथम वर्षक प्रत्यक्ष गप्प

पत्नी—'प्रत्यक्ष आओर अप्रत्यक्ष मे की भेद अछि?'

पति—'कोनो खास नहि। एना बुझि लिअ जे अहाँ हमरा सँ रुपैया माँगिकऽ लेलहुँ, त ई भेल प्रत्यक्ष; आ हमरा सुतला पर जेबी सँ निकालि लैत छी, त ई भेल अप्रत्यक्ष।'

सुधा कुमारी, प्रथम वर्षक अओठेठिया गप्प

पुस्तकालय लिपिक (छात्र सँ)—'अहाँकेँ यशोदानन्दजीक पोथी पढ़बा मे बड़ आनन्द अबैत अछि। बराबरि अहाँ हुनकेँ पोथी लऽ जाइत छी।'

छात्र—'बात ई नहि। असली बात छैक जे एक बेर हुनक पोथी मे हमरा एकटा दसटकिया भेटल छल।'

× × × ×

आ रेखा कुमारी, तृतीय वर्षक —–हूँ,— गप्पे!

सुनबा मे आबय अछि जे कोनहुन एकटा मशीन होइत छैक—'कम्प्यूटर'। कठिन सँ कठिन हिसाब चुटकी बजिते साल्भ कऽ दैत छैक —ओझा कहने रहथिन्ह। कहलथिन जे एकटा कोनि कऽ पठा दिय जे ननकिरबा सभकेँ भुलकोलहा मास्टरसँ खाना भेटि जयतैक। आ, बनिबओ बाग त मिथिलाक कुप्रथाक कारणेँ इतकूल नहि जाऽ सकैत अछि। ओहो सभ घरे मे पढ़िकऽ फस्ट करैत रहति। मुदा ओझा लिखलनि्ह अछि जे — — —

आब हम की कहियनु?

प्रथम वर्गक संगीता कुमारी (क्रमांक-८०)क गप्प ओझराएल छन्हि :-

(१) अपन बालककें पिता हर जन्म दिवस पर एक सय टाकाक उपहार दैत रहथिन्ह। ओ बीस साल धरि उपहार देलन्हि। मुदा बीस सालक बाद जखन बालक टाकाक गनती कएल, तँ ओकरा मात्र पाँच सय टाका पुरल। ई कोना भेल ?

(२) एकटा ट्रेन मधुबनी सँ दरभंगा गेल। ट्रेन खचाखच भरल छल, तैयो ओकरा दरभंगा पहुँचबा में मात्र चालीसे मिनट लागल। वैह ट्रेन जखन दरभंगा सँ मधुबनी घुरल, तऽ पूरा भरलो नहि छल, मुदा ओकरा घुरबा में १ घंटा २० मिनट लागि गेलइक। ई कोना भेल ?

(३) एक गोटे दोसर गोटेसँ कहैत छन्हि जे अहाँ हमर भाई छी, मुदा दोसर गोटे हुनका सँ कहैत छथि जे अहाँ हमर भाई नहि छी। दुनू गोटे क बात सच छन्हि, मुदा ई कोना भेल ?

(४) एक राहमे एकेटा ट्रक आबि जाबय वा सकैत छल। एक बेर दुनू कात सँ एकहि समय दूटा ट्रकवाला आबि गेल आ पाछाँ भऽ गेल। ई कोना भेल ?

ANTI–MATTER & ANTI–UNIVERSE

Prof. Mithilesh Kumar Jha
Physics Department

Do you think that there will be an anti-Universe which is unknown to us ? We may suppose that every second galaxy is made up solely of anti-matter; and the every second Universe is made of anti-galaxies.

"How can you say that Nature loves symmetry when God has given us only one heart that is situated on our left side ? True there are some people with the heart on their right side." So said Prof. Abdus Salam, Nobel laureate in Physics. "If Nature loves symmetry always', he added, "God should have given us two hearts or kept one at the Centre."

An atom of any substance is supposed to be made up of a nucleus consisting of heavy and positively charged protons & neutral neutrons round which the light and negatively charged electrons revolve. Scientists were puzzled why there should be only light particles with the negative charge and only heavy particles with the positive charge. This spoils the symmetry observed in Nature. Such deliberations led to the discovery of the positron (Anti-electron) in 1932 and anti proton in 1955. This caused drastic change in physics.

What happens when these particles of oppsite charges are brought together ? If one electron and a positron collide they would annihilate one another, their total energy would get transformed, into gamma rays. When an antiproton meets a proton, to produces election & positron and further they would annihilate one another & energy would get transformed into gamma rays.

On ground, of symmetry, when an antiproton and positron are brought together same thing heppens as when a proton and an electron are brought together—they form an atom. The positron will revolve round the antiproton in the same stable Bohr orbit, and when a positron jumps from [illegible] orbit to the

other, it will emit light of the same frequency as an electron would do round the orbit of a proton.

Thus we can say that these two would form an "anti—hydrogen" atom having the same properties as that of the ordinary hydrogen. Thus we can produce anti-hydrogen molecule & anti hydrogen gas.

By continusing this exercise, we can make an anti-deutron with an antiproton & antineutron. Thus we can make an anti-oxygen gas. This anti-oxygen atom can combine with twice the number of anti-hydrogen atoms to give us anti-water which boils a 100°c and becomes anti-steam or freezes at 0°c and becomes anti-ice. Mixture of water & anti-water would generate tremendous energy; it would explode like a bomb

It should be possible to build up anti-matter from antiprotons, anti-neutrons and positrons. Thus we can form an "anti star" very much like our sun by collecting anti elements with 10^{75} atoms anti-hydrogen. This anti-star will radiate vast amount of en... A collection of anti-star could form an "anti-galaxy and soon".

There is no occuring antimatter on the earth. If there were any when it came into contract with matter, it would create an explosion Our entire solar system consists of only matter. In the outer space, there should be another solar system having anti-matter. Matter and anti-mattet cannot surnine in the same galaxy The light emitted from a star and an anti-star would be alike.

This we can very well say that there will be cen anti-univers, which is unknown to us. This idea can satisfy the demand for symmetry. We my suppose that every second galoxy is made upsobly of anti-matter. And the every second universe is made of anti galaxies.

According to the symmetry rule; there are people with the heart on their right side anti-universe and they cold anti-man. This ii hendred Persent possible because "God loves symmetry".

Now I am attraching you towards the spirithalism. As we know

that the ghos to has no physic or they no eat any thing etc. We can say that the activities of ghost are anti to human. This they are anti-man of anti-univers. Here science Supports the spiritualism. Another example is of "PRALAY"—When anti-universe and our universe came in to contact, create an explosion and all things charges. This type of explosion called "Psalay" in our holy 'Vedas'.

There are some positive evidence for the existence of antimatter in the universe or an anti-universe, Very soon, we will reach to our target.

Give us the knoledge of the laml of nature and both future and post-will reveal their secrets."

Round numbers are always Laise.

S. Johnson.

WORD OF CHEER FOR GREYING GIRLS

Prof. Neelam Bairoliya
Zoology Department

Grey hair is not any personal incidence; rather it has become a common problem.

Delhi scientists have a word of cheer for embarassed young girls with hairs prematurely turned grey.

Researches at the A I I M S, Delhi have raised hopes of turning premature grey hair into black without using hair dye.

Dr. J. S. Pasrich of Dermatology department has reported success with his treatment which he has so far tried on 19 girls between 13 to 25 age-group of the 12 cases, grey to black conversion was remarkable in six girls and partial in ten. There was no effect on three girls.

Dr. Pasricha's remedy for premature grey hair is a daily dose of 200 milligrams of calcium pentothenate, a vitamin which is a constituent of the vitamin B - Complex.

The A I I M S Professor has published the effect of the treatment in the latest issue of the 'Indian Journal of Dermatology and venereology'

Despite the high dose of calcium pentothenate it was found safe and no side-effects were observed, the paper says.

According to Dr. Pasricha, premature greying of hairs is probably due to hereditary factors. In India it is reportedly more common among Punjabi girls. The paper further says that the only way to know if the treatment is effective for an individual is to try the medicinal dose for regular six months and find out "if there are any conversions."

Dr. Pasricha's studies have also exploded the myth that pulling one grey hair will result in more grey hairs. In fact, before starting treatment on few girls, he pulled out all their grey hairs. After treatment the number of grey hairs was less indicating that the follicles which originally produced grey hairs started to produce black hairs. ●

How Small Are We !

Prof. Shatrughna Panjiar
Dept. of English

None but *God* is Good *and* Great.

When I consider how Great are You !
I am filled with joy, then with woe.
Joy because we were created Man.
Man, we know, is your best expression.
We have performed things beyond expectation,
In moments, we can reach Mount Everest.
Thousands of rockets we launch in space.
No doubt, Man has proved a Super-Man.
But alas ! Our gains are lost !
Our deeds are few, misdeeds a lot.
Even Satan stands shocked !
Divine vertues like Love, Modesty,
Have we nursed and crushed to any,
Now I consider how small are we!

BIO-CHEMISTRY OF A WOMAN

(With Malice to none)

Prof. Amar Kumar
Botany Department

Chemical Symbol :—

"Wo"

Atomic Structure :—(MORPHOLOGY) :—

36.-24-36

(This is standard form but varies greatly in two extremes)

HABITAT & Occurence :—

Found where MAN is found with high concentrations, at Beauty Parlours, Movies and shopping centres.

Physical Properties :—

Generally ROUND in form. It is climensional, BOILS at nothing and may FREEZE at any time. MELTS when heated with great Precautions. BITTER if not used in Prescribed manner.

Chemical Properties :—

Explosive. Posses great attinity for GOLD (Au) SILVER (Ag) and Precious stones. Able to absorb great deal of LIPSTICK, TALCUM CREAM, POWDER, MASCARA, HAIRDYE and many more things still unknown to man. Turns GREEN when placed beside a better looking specimen.

Special Property :—

Jealous among own species

IMPORTANCE & USES :—

Highly ornamental, catalyes the disintegration of wealth, tonic in the acceleration of Low spirits. It is probably the most effective income.

Reducing agent :—

Precautions :—

Highly Explosive in experienced hands.

Beware ! Handle with care

संस्थापित : १९७२ दूरभाष : १९८

शुभंकर महासेठ डॉ० धर्मप्रिय लाल

महिला महाविद्यालय, मधुबनी

के

१२वें वार्षिकोत्सव

के अवसर पर

नारी-शिशु कल्याण परिषद्

दरभंगा/मधुबनी

हार्दिक शुभकामना प्रकट करती है।

[नारी-शिशु कल्याण परिषद् नारियों और शिशुओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, जीविका एवं विविध प्रशिक्षणों की प्रमुख स्वयंसेवी संस्था है।]

—सचिव

युनिवर्सल प्रिंटर्स, मधुबनी में मुद्रित।